॥ ॐ ॥

" मुनिसम्मेलन. "

परलोकवासी प्रातःस्मरणीय जैनाचार्य्य न्यायांभोनिधि श्री १००८ श्रीमद्विजयानंद सूरीश्वर (श्री आत्मारामजी) महाराजके साधुओंकी १३ जून सन् १९१२ गुरुवारको देश गुजरात राजधानी वडौदा उपाश्रय जानीशेरीमें एक महती सभाहुई थी. तीर्थ यात्राके सवव मुझेभी इस सभाके देखनेका सौभाग्य मिला. उक्त परिषदमें जो जो प्रस्ताव पास हुए हैं उनका वर्णन पाठकों के दर्शनार्थ आगे किया जावेगा. सबसे प्रथम यह कह देना उचित समझताहूं कि, सभापतिजी वा अन्य महात्माओंकी वक्तृताका अक्षरशः अनुवाद करना तो दुस्साध्य (मुश्किल) है; परंतु आशय वर्णन करने में संभव है कि त्रुटि न होगी.

उक्त सभाका प्रथमाधिवेशन साढेआठसे साढेदश बजे तक हुआथा. सभापतिके आसनको जैनाचार्य श्री विजयकमलसूरिजीने सुशोभित कियाथा. 85

दर्शक स्त्री मनुष्योंका समुदाय अनुमान एक सहस्रसे अधिक मालूम देताथा. नियत समयपर सभापतिजीनेभी अपने आसनको अलंकृत किया. आपके आगमनमें जयध्वनिसे मनुष्योंने जो उत्साह प्रकट किया वह एक असाधारण था.

सभापतिजीके बैठनेके बाद देशदेशांतरोंसे आये हुए अन्य महात्माभी यथा निर्णित स्थानोंपर बैठ गये.

इस समयकी शोभा वास्तविकमें हीं कुछ अनूठीथी. इस दृश्यको उपमित करनेके लिये संभव है कि, कविकुल तिलकोंके घरमेंभी कोई शब्द न निकलेंगे.

मंगलाचरण.

प्रारंभमें मुनि परिषद्की निर्विघ्न समाप्तिके लिये देवस्तुति और गुरुस्तुति की गई.

मुनिसंमेलनके उद्देशपर मुनिराज श्रीवल्लभ-विजयजीका व्याख्यान.

सभापतिजीकी आज्ञासे मुनिराज श्रीवल्लभविजयजीने यात्रामें अनेक कष्ट सहन करके देश देशांतरोंसे आये हुए मुनिराजोंको सादर अभिमुख कर कहा कि:

महाशयो! आज जो आपलोग यहांपर एकत्रित हुए हैं इसका हेतु क्या है? क्या यह नवीन ही शैली है या पहेलेभी ऐसे सम्मेलन हुआ करतेथे? इत्यादि प्रश्नोंका मनुष्योंके हृदयमें उठना एक स्वाभाविक बात है. इस बातके विवेचन करनेसे पहले यह कहदेना अवश्य उचित होगा कि, यह परिषद् केवल साधुओंकी ही है. इसमें अन्य किसीको सिवाय साधुके बोलनेका या दखल देनेका सर्वथा अधिकार नहीं, यह बात ध्यानमें रहे.

यह सभा किस लिये की गई है? इसका उद्देश क्या है?

इस प्रश्नका उत्तर देनेसे पहले मुझे तीसरे प्रश्नपर विचार कर लेनेकी प्रथम आवश्यकता है.

महानुभावो ! हमने यह कोई नवीन आडंबर खड़ा नहीं किया. इसे सभा कहो, सम्मेलन कहो इकट्ठे होना कहो या वर्तमानकाल के अनुसार (जमाना हाल के मुताविक) कॉन्फ्रॅन्स कहो ! मतलब सवका एक ही है. ऐसी ऐसी सभायें या सम्मेलन प्रथमभी हुआ करतेथे यह बात इतिहासोंसे बखूबी मालूम हो सकती है. हमारे पूर्वजोंने इस संमेलनसे क्या क्या फायदे उठाये हैं इस वातकोभी हमें इतिहास अच्छी तरह वतला रहा है. कालचक्रके प्रभाव (जमानेकी गर्दश) से वीचमें लुप्तप्रायः हुए हुए उन्नति कर इस उत्तम मार्गको नवीन समझना एक भूल है. पुरातन मुनि कर्त्तव्यको ही फिरसे उत्तेजित करनेके लिये यह उद्योग है.

अच्छा ! अब यह सम्मेलन किस लिये हुआ है वह मैं आपको वतलाता हूं. ऐसे सम्मेलन करनेसे अपने मुनियोंका दूर दूर देशोंसे आकर एक स्थानमें मिलना इससे दर्शनका लाभ, और जो एक दूसरेकी परस्पर पहिचान नहीं है वहभी हो, और परस्पर आपसमें प्रीतिभावका होना. उससे जो धर्म संवंधी कार्य हों उनमें एक दूसरेकी मददका मिलना और अपने इस सम्मेलनको देख कर अन्यभी इस प्रकारसे धर्मोन्नतिके लिये सम्मेलन करना सीखें जिससे दिनपरदिन शाशनकी उन्नति हो. इसके अलावा एक महत्वका कारण यहभी है कि, अपने साधु तो फिरते राम होते हैं. एक स्थानमें सिवाय चतुर्मासके रहतेही नहीं ! शेषाकाल विहारमें फिरते

गुजरता है. चतुर्मासमें सबका मिलना मुश्किल, भिन्न भिन्न स्थानोंमें चतुर्मास होनेसे परस्पर मिलनेका समय वर्षों तक भी हाथ नहीं आता इस हालतमें कोई मनुष्य किसी एक अपनी स्वार्थ सिद्धिके लिये आपसमें कुसंप करानेको एक दूसरेकी सच झूठ बातें एक दूसरोंको भराकर जो कदापि विक्षेप डाले या डाला हो तो इस प्रकारके संमेलनसे जो अंदरकी कोइ आंटी पड गइ हो वह फौरन ही सत्य बातके प्रतीत होनेपर निकल जाती है. यह कोइ थोडे लाभका कारण नहीं है! और मोटेसे मोटा फायदा तो यह है कि अपनेमें एकताकी मजबूती होगी. इस ऐक्यकी जरूरत प्राचीन वा अर्वाचीन हरएक वक्तमें है जो हमारेमें एकता होगी तोही हम हर एक धर्म-कार्य्यको पूरा कर शाशनकी उन्नति कर सकेंगें. और अपने इस कार्यका अनुकरण अन्यभी करेंगे. उससेभी हमको फायदा होगा. संमेलनमें संख्याबंध साधु विद्वानवर्गके एकत्रित होनेसे उन विद्वानोंके जुदे जुदे आशय वा तरह तरहके अनुभवी विचारोंके प्रकट होनेकाभी यह एक उत्तम साधन है. जब कभी किसी धर्म संबंधि कार्यको तरक्की कर उसे ऊंचे दरजे पर पहुंचाना हो या कोइभी सुधारा करना हो तो ऐसे सम्मेलनसे ही हो शकता है. क्यों कि अगर किसी एक कार्य-को कोइ अकेला साधु करना या कराना चाहे तो उसमें कई प्रकारके उसे विघ्न आ उपस्थित होते हैं! अगर वही कार्य सबकी संमति या सम्मेलनसे उठाया जावे तो फौरन ही वह भले प्रकार शिरे पहुंचेगा. उसमें जैसी मदद चाहें वैसी मदद हर तर्फसे मिल शक्ति है. हर एक कार्य आसानीसे हो सकता है. इत्यादि बडे बडे फायदे सम्मेलनमें समाये हुए हैं.

कायदे याने नियम सम्मेलन करके बांधे जायें तो वह सर्व मान्य और पायेदार मजबूत रह सकते हैं. अकेला चाहे कोई कितनाहीं प्रयास करे तोभी उस पर न कोई गौरही करता है नाहीं उसका किसी पर वजन पडता है " अकेला एक दो ग्यारां " इस लिये इस प्रकारके मुनि संमेलनकी आवश्यकता मुझे वहुत अरसेसे लग रहीथी. इस लिये यह संमेलन देख कर मेरा चित्त आनंदसे फूला नहीं समाता. वह मेरी आशा आज पूर्ण हुई. आप जैसे महात्माओंके दर्शनका जो लाभ हुआ है वह साधारणसे आनंदकी वात नहीं है ! आप लोग जो दूर दूर देशांतरोंसे महान संकटोंको सहन करके पधारे हो इससे साफ प्रकट है कि आपभी इस संमेलनकी आवश्यकताको स्वीकारते हैं ऐसा मैं मानता हूं. महाशयो ! अब मैं सभापति श्री आचार्यजी महाराजसे अपना भाषण करनेकी प्रार्थना करके वैठ जाता हूं ॥ इसके वाद—

सभापति आचार्य महाराज श्रीविजयकमलशूरिजी का व्याख्यान (भाषण) जो कि लिखा हुआथा मुनि श्री वल्लभ विजयजीको ही सुनानेके लिये कहा. आपकी आज्ञा पातेही मुनिश्रीने ज्यूंका त्यूं पढ सुनाया.

"आचार्य श्रीमद्विजय कमलसूरीश्वरजीका व्याख्यान."

मान्य मुनिवरो ! मुझे कहते हुए वड़ा ही आनंद हो रहा है कि, परम पूज्य न्यायांभोनिधि श्रीमद्विजयानंद सूरीश्वर प्रसिद्ध नाम श्रीमद् आत्मारामजी महाराजका शिष्य प-

रिवार जितनी संख्यामें आज यहां एकत्र विराजमान है, उतनी संख्यामें पहले कभीभी कहीं एकत्रित नहीं हुआथा! इस मुनि सम्मेलनका पूर्ण मान मुनिश्री वल्लभविजयजीको है. क्यों कि, इस तरह मुनिमंडलको एकत्र होनेकी प्रेरणा इन्होंने हीं कीथी. और उसी सूचनानुसार हम तुम यहां इकट्ठे हुए हैं.

मुनिवरो! यह मुझे अच्छी तरह याद है कि, आप सव दूर दूर प्रदेशसे वहुतसे परीपहोंको सहन करके यहां पधारे हैं, जिसको देखकर मुझे वह आनंद हो रहा है जो अकथनीय है.

महाशयो! आप सव जानतेही हैं कि कितनेक अरसेसे हरएक धर्म्म, हरएक समाज, और हरएक कौम वाले अपनी अपनी परिपदें, कॉन्फ्रॅन्सें करते हैं और उसके द्वारा धर्ममें, समाजमें, कौममें जो खामियां हैं उनको दूर करनेका प्रयत्न करेते हैं.

अपने जैन कौमके नेता ग्रहस्थोंनेभी समाज और धर्मकी उन्नतिके लिये ऐसी कॉन्फ्रॅन्स करनेकी शरूआत कीथी. और सात (७) स्थानोंपर हुईभी थी. परंतु खेद है कि, उत्साही प्रचारकोंकी ख़ामी होनेसे हाल कॉन्फ्रॅन्स सोती हुई मालूम देती है.

अपने श्वेतांवर संप्रदायके अनुयायी समग्र साधुओंको कितनाक काल पूर्वही ऐसे साधु संमेलन करनेकी आवश्यकताथी; परंतु परस्पर चलते हुए कितनेक मतभेदादि कारणोंसे मुनिवर्ग संमेलनादि कार्य नहीं कर सका! अपना अ-

र्थात् साधुओंका कर्त्तव्य उच्च तत्वोंका अधिक प्रचार कर अर्हन् परमात्मा श्रीमहावीर भगवानने जगतके उद्धार निमित्त जो रस्ता वताया है उसे जगतवासी जीवोंको दिखानेका है. परंतु दुखके साथ कहना पडता है कि, उस तर्फ अपनी दृष्टि जैसी चाहिये वैसी नहीं रहनेके सवव तथा अंदर अंदरके अमुक मत भिन्न होनेके कारण हम तुम अर्थात् समग्र मुनिवर्ग उपरोक्त स्वकर्तव्यका पालन नहीं कर सके!

अपने पूज्य पूर्वर्षियोंने अपनी अगाध और अलौकिक शक्तिसे जो जो महान् कार्य कियेथे उनहीं महर्पियोंकी संतान कहलानेवाले हम तुम उनके जैसे काम करने तो दूर रहे, परंतु जो वेकर गये हैं उसे सम्हालनेकी शक्तिभी हम तुममें नहीं रही! क्या यह वात लज्जास्पद नहीं है? जिस समय हजारों हिन्दु वलात्कार स्वधर्मसे भ्रष्ट हो रहेथे, संसारमें आदर्श रूप पवित्र हिन्दुओंके मंदिर तोडे जा रहेथे, ऐसे घोर अत्याचारी राजाओंके राज्यमें भी अपने पूर्वाचार्योंने अपनी आत्मशक्ति और अतुल विद्वत्तासे पवित्र जैनधर्मकी जय पताका सारे भारतवर्पमें उडाईथी! हम तुम तो प्रतापी ब्रिटिश शाहनशाह नामदार पंचम ज्यॉर्जके शांतिप्रिय राज्यमें तथा विद्याविलासी श्रीमान् महाराजा सयाजीराव गायकवाड़के जैसे उत्तम राज्योंमेंभी धर्मोन्नति नहीं कर सकते यह देखकर मुझे वडा खेद होता हैं. अपने पूर्वाचार्योंकी अतुल विद्वत्ताका उदाहरण पाटण, खंभायत, जैसलमेर, लींवडी आदिके ज्ञानभंडार सारे संसारको दे रहे हैं. हम तुममें वर्तमान समयके अनुसार नये ग्रंथ वनानेकी शक्ति तो दूर रही; परंतु

जो अमूल्य ज्ञानका खजाना पूर्व महर्षि अपने लिये रख गये हैं उसे समझनेकीभी पूरी शक्ति नहीं यह कितने दुःखकी बात है?

महाशयो! मैं पहलेही कहचुकाहूं कि समग्र साधु समुदायके एकत्र होनेकी वहुत जरूरत थी. क्यों कि, एकत्र होनेसे पृथक पृथक गच्छोंमें या एकही गच्छके भिन्न भिन्न समुदायोंमें जो परस्पर मतभेद तथा भिन्न भिन्न विचारादि है, वह दूर हो सकते हैं. और आपसमें प्रीतिभाव उत्पन्न होता है. परंतु वर्तमान स्थितिका अवलोकन करनेसे मुझे मालूम हुआ कि, श्वेतांवर संप्रदायके समग्र साधुओंका एकत्र होनेका हाल कोईभी संयोग नहीं है. विलकुल न होनेसे तो केवल अपने (श्री आत्मारामजी महाराजके) समुदायके साधुओंका ही एक सम्मेलन हो तो वहुत अच्छा है. ऐसा मेरा विचार था ही. कि इतनेमें मुनि श्रीवल्लभ विजयजीकी तरफसे सूचना हुई. और शाशन देवकी कृपासे वह मेरा मनोर्थ और मुनिश्री वल्लभविजयजीके श्लाघनीय उद्यमका फलरूप कार्य यह संमेलन नजर आ रहा है.

साधु संमेलन होनेकी खवर सुनकर सव जैनसमाज खुश होगा. और यही कहेगा कि यह विचार अत्युत्तम है इसको अमलमें लानेकी पूर्ण आवश्यकता है. परंतु व्यवहार दृष्टिसे मालूम होता है कि, " श्रेयांसि वहु विघ्नानि " इस नियमानुसार वीचमें आफतके पहाडभी खडे हैं. क्यों कि साधु सम्मेलनकी शुरूआत करनी और निरंतर अमुक समयके वाद सम्मेलन होना चाहिये. ऐसा सिलसिला जारी रखना यह काम

साधुओंकी हालकी स्थिति तथा संकुचित वृत्ति आदिकी तर्फ ख्याल करनेसे सुगम नहीं मालूम होता. क्यों कि ऐसे सम्मेलनोंद्वारा होनेवाले फायदोंकी तर्फ दृष्टि किसी पुण्यशाली पुरुषकीही होती है. सम्मेलनोंद्वारा किये हुए नियमोंको जब अमलमें लानेकी आवश्यकता होती है तब उस तरफ बिलकुल दुर्लक्ष जैसा दिखाई देता है. जहां ऐसी स्थिति हो वहां सम्मेलनोंद्वारा हुए नियमोंको यथार्थ मान मिलना और उनका उत्साहपूर्वक पालन करना असंभव नहीं, परन्तु मुश्किल तो अवश्य है. अस्तु ऐसा होनेसे अपनेको निराश होना नहीं चाहिये. प्रयत्न करना अपना कर्तव्य है. और इस कर्तव्यकी तर्फ उत्साहपूर्वक लगे रहेंगे तो कभी न कभी अवश्य सफलता प्राप्त होगी.

मान्य मुनिवरो! जमाने हालमें विद्या प्राप्त करनेके अनेक साधनोंके होनेपरभी कितनोंने, उच्च विद्या प्राप्त की, यह छिपा हुआ नहीं है. उस जमानेकी तरफ ख्याल करो कि, जिस समय महामहोपाध्याय न्याय विशारद श्रीमद् यशोविजयजी तथा उपाध्याय श्रीमद् विनयविजयजीने काशी जैसे दूर प्रदेशमें जाकर कैसी मुसीबतसे विद्या प्राप्त कीथी! मगर इस जमानेमें जहां चाहे वाहां अच्छेसे अच्छे पंडित रखकर विद्याभ्यास कर सकते हैं इतनी अनुकूलता होनेपरभी साधुओंमें उच्च ज्ञानकी बहुत खामी नजर आती है. कितनेक साधु सामान्य ज्ञान अर्थात् साधारण कथा ग्रंथ वांचने जितना बोध हुआ कि, बस सब कुछ आ गया! ऐसा मानकर आगे अभ्यास करना बंद कर देते हैं. ऐसा नहीं होना

चाहिये! किंतु अच्छी तरह न्यायशास्त्रादि तत्वज्ञानका पूरा अभ्यास करना चाहिये. यह खूब ध्यानमें रखना! कि उंचे प्रकारके विद्याध्ययनके विना साधुओंका महत्व टिके, ऐसा समय अब नहीं रहा! इस लिये जैनसमुदायमें विद्याकी वृद्धि हो, ऐसे प्रयत्नकी बहुत जरूरत है. जब ऐसा होगा तबही समुदाय, समाज और आत्माकी उन्नति होगी. शास्त्रोंमेंभी "पढमं णाणं तओ दया" "ज्ञानादृते न मुक्तिः" इत्यादि फरमान है.

अपनेमें अर्थात् श्रीमद् विजयानंद सूरीश्वरजीके शिष्य समुदायमें देशकालानुसार प्रायः आचार संबंधी शिथिलता नहीं है. तो भी, भविष्यके लिये समयानुसार कितनेक नियम करनेकी आवश्यकता मालूम देती है. भिन्न भिन्न संप्रदायके साधुओंकी पृथक पृथक प्रवृत्ति देखकर भय है कि, अपने साधुओंमेंभी संगत दोष न लग जाय, इस लिये भी कितनेक नियम करनेकी जरूरत है. कितनेक अन्य साधु विहारमें अपने उपकरण आदि गृहस्थोंसे उठवा कर चलते हैं, कपडे ग्रहस्थसे धुलवाते हैं, और केशलुंचन (रोगादि कारणके अतिरिक्त) भी बहुतसे साधु छोड बैठे हैं. तथा कितनेक साधु गुरुआदि वृद्ध पुरुषोंसे, गुप्त पत्रव्यवहार आदि करते हैं इत्यादि कितनीक बातें ऐसी हैं जो. उनके लिये कुछ बंदोबस्त न किया जाय तो किसी समय हानिकारक परिणाम आनेका संभव है.

कितनेक साधु देशकालका विचार किये विना शिष्य परिवार बढानेकी लालचमें फसकर ऐसे ऐसे कार्य करते हैं,

जिससे कि धर्मकी और कौमकी न सही जाय, ऐसी बदनक्षी जैनेतर लोक करते हैं. और इस पवित्र धर्मकी तर्फ घृणित विचार प्रकट करते हैं.

इस बातके लियेभी अपनेको कोई ऐसा प्रबंध करनेकी जरूरत है. जिससेकि धर्मकी हीलनारूप घोर कलंक अपने शिरपर न आवे !

यह जमाना खंडन मंडन या कठोर भाषाके व्यवहार करनेका नहीं है. किंतु शांततापूर्वक अर्हन् परमात्माके कहे सच्चे तत्वोंको समझा कर प्रचार करनेका है. वर्तमान समयमें प्रचालित राज्य भाषा जो कि, इंग्लिश है उसका ज्ञानभी साधुओंमें होनेकी जरूरत है. कितनेक साधुओंकी इतनी संकुचित वृत्ति है कि, उपाश्रयके बाहर क्या हो रहा है ? इसकाभी पता नहीं है ! यही कारण है, जो जैन जातिकी संख्या प्रतिदिन घटती जाती है ! जबके अन्य जातियें अपनी उन्नतिको नदीके पूरके समान बढा रही हैं तो जैन जाति जोंकि उन्नतिकी ही मूर्ति कही जा सकती है, उसको अपनी उन्नतिमें योग्य ध्यान नहीं देना अतीव चिंतनीय है !

महानुभावो ! सोचो ! यदि ऐसीही स्थिति दो चार शताब्दी तक रही तो, न मालूम, जैन जातिका दरजा इतिहासमें कहां पर जा ठहरेगा. ? इस लिये अपनेको इन बातोंपर विचार कर ऐसा प्रबंध करना चाहिये. जिससे कि अपने समुदायकी तर्फसे धर्मकी उन्नति प्रतिदिन अधिकसे अधिक हो और उसकी छाप दूसरे समुदायपरभी पडे !

अपने साधुओंकी संख्या अन्य संघाडेके साधुओंसे अधिक है इससे जहां जहां जिन जिन स्थलोंमें साधुओंका जाना नहीं होनेसे हजारों जीव जैन धर्मसे पतित होते जाते हैं. ऐसे क्षेत्रोंमें विचरना. और उनको उपदेश देकर धर्ममें दृढ़ करना. यदि अपने साधु ऐसा मनमें विचार लेवें तो, थोडेही कालमें बहुत कुछ उपकार हो सकता हैं. बहुतसे साधु केवल बड़ेबड़े शहरोंमें ही विचरते हैं. इससे विचारे ग्रामोंके भाविक जीव वर्षोंतक साधुओंके दर्शन और उपदेश विना तरसतें रहते हैं. इससे अपने साधुओंको चाहिये कि, जहां अधिकतर धर्मकी उन्नति हो, वहां परही चतुर्मासादि करें.

महाशयो ! मैंने आपका समय बहुत लिया है. परंतु अपने साधुओंका सम्मेलन होनेका पहलाही प्रसंग है. जिससे प्रथम आरंभमें मजबूत काम होना चाहिये. ताकि भविष्यमें यह अपना प्रथम संमेलन औरोंके लिये उदाहरण रूप हो जावे. अतः मैं आशा करता हूं कि, सब मुनिमंडल इस बातको लक्षमें रखकर इस कार्यमें सफलता प्राप्त करेगा. अब मैं इतनाही कहकर अपने भाषणको समाप्त करता हूं.

सभापतिजीके व्याख्यानके बाद आपकी आज्ञासे जिस रीतिपर सम्मेलनका काम हुआ वह नीचे लिखा जाता है.

प्रस्ताव पहला.

(१)

☞ अपने समुदायके प्रत्येक साधुको चाहिये कि, वर्त्तमान आचार्य महाराज जहां चतुर्मास करनेके लिये कहें. वहां

ही किया जाय; यदि किसीकी इच्छा किसी अन्य क्षेत्रमें चतुर्मास करनेकी हो, और आचार्य महाराज वहांकी अपेक्षा और कहीं चतुर्मास करनेमें अधिक लाभ समझते हों तो, उनकी आज्ञानुसार दूसरेही स्थानपर प्रसन्नतापूर्वक चतुर्मास व्यतीत करना चाहिये.

यह प्रस्ताव उपाध्याय श्रीवीरविजयजी महाराजने पेश कियाथा. जिसकी पुष्टि मुनिराज श्रीहंसविजयजी महाराजने बड़ी अच्छी तरहसे कीथी. आखीर सर्व मुनियोंकी सम्मतिके अनुसार प्रथम प्रस्ताव पास किया गया.

प्रस्ताव दूसरा.

(२)

☞ विना किसी खास कारणके अपने साधुओंको, एक चतुर्मासके ऊपर दूसरा चतुर्मास उसी क्षेत्रमें नहीं करना. तथा चतुर्मास पूरा होते ही शीघ्रविहार करदेना चाहिये. यदि किसी खास कारणसे आचार्य महाराज आज्ञा फरमावें-तो, चतुर्मासके ऊपर दूसरा चतुर्मास करनेमें हरकत नहीं.

यह प्रस्ताव मुनिश्री हंसविजयजी महाराजने पेश कियाथा. जिसकी पुष्टि मुनिश्री चतुरविजयजीने अच्छी तरहसे कीथी.

प्रस्तावपर विवेचन करते हुए मुनिश्री हंसविजयजी महाराजने मालूम कियाथा कि.

" वहता पानी निर्मला, खड़ा गंधीला होय।
"साधु तो रमता भला, दाग न लागे कोय॥"

याने गंगादिका वहता प्रवाह जैसे स्वच्छ रहता है. ऐसेही, रमते अर्थात् देशदेशमे विचरते साधु निर्मल रहते हैं. उनको कोई प्रकारका दागभी नहीं लग सकता. परंतु जैसे छपडी (खावोचिया)का खड़ा पानी गंदा हो जाता है. वैसे ही, एकके एकही स्थानमें रहनेवाले साधुको दोष लगनेका संभव होता है. अतः साधुको एक स्थानमें रहना योग्य नहीं इत्यादि. अंतमें सर्वकी संम्मतिसे यह नियमभी पास किया गया.

प्रस्ताव तीसरा.

(३)

अपने समुदायके मुनियोंको एकल विहारी नहीं होना चाहिये, अर्थात् दो साधुसे कम न रहेना चाहिये. यदि किसी कारणसे एकके ही रहनेका प्रसंग आवे तो श्रीमद् आचार्य महाराजकी आज्ञा ले लेना चाहिये.

यह नियम मुनिराज श्रीवल्लभविजयजी महाराजने पेश कियाथा. जिसपर मुनि श्रीप्रेमविजयजीने पूर्ण तया पुष्टि दिये वाद सर्व मुनियोंकी संमति अनुसार यह प्रस्ताव पास किया गया.

इस नियमको प्रस्तावित करते हुए, मुनिराज श्री

वल्लभविजयजीने मुनिमंडलके ध्यानको आकर्षित कर कहा कि, शास्त्राज्ञानुसार साधुको दोसे कम, और साध्वीयोंको तीनसे कम नहीं रहना चाहिये. जहां कहीं इस शास्त्राज्ञासे विपरीत हो रहा है, वहां स्वछंदता आदि अनेक दोषोंका समावेश हुआ नजर आ रहा है! अतः इस वातमें श्रावक लोकोंकाभी कर्त्तव्य समझा जाता है कि, जव कभी किसी अकेले साधुको देखें तो शीघ्रही उसके गुरु आदिको खवर कर दे देवें ता कि, एकल विहारियोंको कुछ ख्याल होवे. परंतु, श्रावकोंको उपाश्रयका दरवाजा खुला रखना, और सौ डेढसौ रुपये की, पर्युषणाके दिनोंमें पैदायश करनी, इस वातकाही ख्याल नहीं रखना चाहिये!

प्रस्ताव चौथा.

(४)

कोई साधु, जिसके पास आप रहता हो उससे नाराज होकर चाहे जिस किसी अपने दूसरे साधुके साथमें जा मिले तो, उसको विना आचार्य महाराजकी आज्ञाके अपने साथ हरगिज न मिलावे.

यह नियम मुनिश्री विमलविजयजीने पेश कियाथा जिसको मुनिश्री जिनविजयजीने पुष्टि करते हुए कहा कि, पूज्य मुनिवरो! मुनिश्री विमलविजयजी महाराजने जो प्रस्ताव पेश किया है, इसपर मुनि सम्मेलनको विचार

करनेकी पूरी आवश्यकता है इस नियमके पास होनेसे, कई प्रकारके फायदे हैं प्रथम तो, यही वडा लाभ होगा कि, साधुओंकी स्वच्छंदता वढनी वंद हो जावेगी नहीं तो, आपसमें अर्थात् गुरु शिष्योंमें या गुरुभाई आदिमें छद्मस्थ होनेसे, साधारणभी वोलाचाली या खटपट हो गई हो, तो झट दूसरे साधुके पास जानेके इरादेसे यह जानके कि, क्या है ? यहां नहीं मन मिला तो दूसरेके पास जा रहेंगे झट समुदायसे पैर वाहर रखनेकी, मरजी हो जायगी और जब ऐसा होगा तो विनयादि गुण, जो खास मुनिके भूषणरूप हैं उनका नाश होगा. यह तो, आप अच्छी तरह जानते हैं कि आजकलके साधारण जीवोंमें कितना वैराग्य और विरक्त भाव है. इस लिये इस नियमके करनेसे स्वछंदताका कारण नष्ट होगा क्यों कि, जब कोई नाराज हो कर दूसरे साधुके पास जानेका इरादा करेगा. तो वह पहले इस वातको अवश्य विचार लेगा कि, मैं दूसरेके पास जाताता हूं परंतु, आचार्य महाराजकी आज्ञा वगैर तो अन्य रखेंगेही नहीं और जब आचार्यश्रीकी आज्ञा मंगाऊंगा तो सारा वृत्तांतही प्रगट हो जायेगा. फिरतो, जैसी आचार्यजीकी मरजी होगी तदनुसार बनेगा इत्यादि विचार स्वयं ठिकाने आ जावेगा और ऐसा होनेसे वो गुण प्रगट होगा कि जिस गुणके प्रभावसे साधुमें सहनशीलता परस्पर प्रीतिभाव (संप) की वृद्धि होगी. अतः इस नियमको पास करनेके लिये जोरके साथ मैं मुनिमंडलके ध्यानको आकर्षित करता हूं.

इस प्रस्तावको पेश करते हुए मुनिश्री विमलविजयजीने खुलासा कियाथा कि, इस प्रस्तावका मतलब यह है कि, किसी दूसरे साधुका चेला नाराज होकर अपने गुरुको या गुरुभाई आदिको छोडकर आया हो उसको कितने एक साधु अपने पास रख लेते हैं ऐसा नहीं होना चाहिये ! कारण कि, ऐक्यमें त्रुटि और शिष्यको गुरुकी वेपरवाही होनेका संभव है.

आनेवालेके मनमें यूं आ जाता है कि, ओह ! क्या है ! वस ! मैं जिसके साथमें जी चाहेगा उसके साथ जा रहुंगा ! मुझे गुरुकी क्या परवाह है ? इतनाहीं नही ! वलकि, किसी गुन्हा (कसूर) के होनेवर अगर गुरुने कुछ हित शिक्षा दी हो, तो उसकी हित शिक्षाको उलटी मना, दूसरेके पास जाकर अवर्णवाद वोल, गुरुकोही झूठा ठहराकर आप सच्चा वननेकी चेष्टा करता है ! इसका आपसकी प्रीतिभावमें विघ्न डालनेके सिवाय, अन्य किंचित् मात्रभी फायदा नजर नहीं आता ! इत्यादि कारणोको लेकर इस नियमके पास होनेकी परम आवश्यकता है.

अंतमें यह प्रस्ताव सर्वकी संमतिके अनुसार पास किया गया.

प्रस्ताव पांचवा.

(५)

☞ जिसने एक दफा दीक्षा लेकर छोडदीहो उसको विना

श्री आचार्य महाराजकी आज्ञाके, दुवारा दीक्षा नहीं देनी चाहिये. संवेग पक्षके अलावा अन्यके लियेभी जहांतक होसके वहांतक आचार्य महाराजकी आज्ञानुसार ही कार्य करना ठीक है.

इस प्रस्तावको पन्यासश्री दानविजयजीने पेश करते हुए विशेप खुलासेसें कहा कि, जो एकवार दीक्षा छोडकर चला गया हो और वह पुनः दीक्षा लेने आवे तो उसके लिये इस अंकुशकी खास जरूरत है. कारणकि, वह मनुष्य किस कारण दुवारा दीक्षा लेता है, यह समझनेकी शक्ति जितनी मोटे पुरुषोमें होती है उतनी सामान्य साधुमें नहीं होती. कदाच दुसरीवारभी दीक्षा लेकर फिर छोड दे ! इसलिये आचार्य महाराजकी सम्मति लेनी चाहिये.

इस प्रस्तावकी पुष्टि मुनिश्री ललितविजयजीने की थी बाद मे यह प्रस्ताव सर्व सम्मतिसे पास किया गया.

प्रस्ताव छठा.

(६)

☞ साधुप्रायः मोटे मोटे शहरोंमें और उसमेंभी खासकर गुजरात देशमेंही, चतुर्मास करते हैं. परंतु साधुओंके विहारसे अलभ्य लाभ हो, ऐसे स्थलोंमें जैसेकि, मारवाड मेवाड, मालवा, पंजाब, कच्छ, वागड, दक्षिण पूर्व वगैरह देशोंमें साधुओंका जाना थोडा मालूम देता है. साधुओंके न जानेसे जैनधर्म पालनेवाले संख्याबंध अन्यधर्मी हो गये. और

होते जाते हैं इसबातपर, इसमुनिमंडलको मानपूर्वक ध्यान देना चाहिये. और सम्मति प्रगट करनी चाहियेकि, साधुओ-को गुजरात छोड हिन्दुस्तानके हरएक हिस्सोंमें विहार कर-नेकी तजवीज करनी चाहिये.

इस प्रस्तावको मुनिराजश्री वल्लभविजयजी महारा-जने पेश करते हुए कहाकि—

महाशयो ! आप अच्छी तरह जानते हैं कि, साधु मोटे मोटे शहरोंमें संख्याबंध पंदरा पंदरा वीस वीस हमेशह पडे रहते हैं ! लेकिन, ऐसे बहुत ग्राम खाली रह जाते हैं जहां-पर शहरोंके बनिसबत अलभ्य लाभ हो. कितनेक साधुतो विहारकी सुगमता और आहार पाणीकी सुलभताको देखकर गुजरात देश छोड अन्य देशोंमें जानेकी इच्छाभी नहीं करते! जानातो दरकिनार ! फिर ख्याल करो, कि जो साधुओंके लिये परीषह सहन करनेकी भगवतने आज्ञा फरमाई है उसका अनुभव क्योंकर हो सक्ता है ? परिचित स्थानमेंतो जिसवक्त साधुमहाराज गौचरी लेनेको पधारते हैं उस वक्त मुनियोंके पीछे श्रावकोंके टोलेके टोले साथहो लेते हैं ! कोइतो इधरको खींचता है कि, इधर महाराज ! इधर प-धारो ! और कोई अपनीही तरफ. लेकिन, जहां पंजाब मार-वाडआदि स्थानोंमें कितनेक ठिकाने श्रावकोंके घरही नही. या वह लोग अन्य धर्मपालन करने लग गये हैं वैसे स्थानोंमें विहार होवेतो, परीषहोंकाभी अनुभव होवे.

महाशयो ! अपने साधुओंको तो प्रायःयह अच्छी तरहसे

अनुभव है कि विना साधुओंके हजारों जैन अन्यधर्मवालों के सतत परिचय होनेसे उनकेही अनुयायी होते जाते हैं. अपने महान आचार्योंने जिन्हे प्रतिबोधकर जैन धर्ममें दृढ कियाथा आज हम उन्हें मिथ्यात्वमें पडते देखकरभी कुछ ख्याल न करें, या परीषहोंसे डरके मारे अपनी कमजोरी वतलाकर गुजरातमें ही पडे रहें, यह हमें शोभनीय नहीं है. महाशयो ! अपने जैन श्रावकोंकी संख्या दिनपर दिन घटती जाती है उसका दोष अपनेही ऊपर है ! एक समय ऐसाथा कि एक देशसे दुसरे देशमें जाना वडा ही मुश्किल कामथा. अन्य धर्मवालोंकी तर्फसे राजाओंकी तर्फसे चोर और लुटेरोंकी तर्फसे, साधुओंको विहारमें बडी मुसीवतें पडती थीं ! ऐसे विकट समयमेंभी अपने पूर्वाचार्योंने दूरदूर देशोंमें जाकर, लोकोंको प्रतिबोधकर जैनधर्मी वनायाथा. आजतो प्रतापी नामदार गवर्मेन्ट सरकार अंगरेज वहादुरके राज्यमें साधुओंको विहारके साधन ऐसे सुलभ हैं कि, जी चाहे वहां वेधडक विचरते फिरें ! किसी प्रकारका भय नहीं है ! ऐसे शासनमें अगर चाहो तो उनसेभी अधिक कार्य कर सक्ते हो. लेकिन, अफसोसके साथ कहना पडता है कि, उन्नति करनी तो दूर रही. हां अवनतिका रस्ता तो पकडाही हुआ है ! जरा पालीतानाकी तर्फ ख्याल करो. तीर्थकी आड लेकर कितने साधु साध्वी दरसाल वहांके वहांही समय गुजारते हैं ! कभी वहुता जोर मारा तो भावनगर, और उससे अधिक अनुग्रह किया तो अहमदावाद, वस इधर उधर फिर फिरा फिर पालीतानाका पालीताना ! श्वसुर गृहसे पितृगृह और पितृगृहसे श्वसुरगृह ज्यादा जोर मारा कभी मातुल-

गृह (मोसाल-नानके) के जैसा हाल हो रहा है ! वहां आहार पानी आदिकी शुद्धि कितनी और किस प्रकार रहती है सो साधु साध्वी क्या श्रावक श्राविकाभी अच्छी तरह जानते हैं ! कि, राग दृष्टिके वशहो भक्तिके वदले भुक्ति की जाती है ! यदि वह साधु साध्वी जुदे जुदे स्थानोंमें चतुर्मासादि करें. तथा, अन्यान्य देशमें विहार करें तो, कितना वड़ा भारी लाभ साधु साध्वी और श्रावक श्राविका दोनोंही पक्षको होवे ! वेशक ! मेरा कहना कईयोंको नागवार गुजरेगा मगर न्यायदृष्टिसे शोचेंगेतो यकीन है कि वो स्वयं अपनी भूल स्वीकार करेंगे. इसलिये अपनी कमजोरीको छोडकर चुस्त वनो ! मेरी यह खास सूचना है कि, हरएक साधु अपने संघाड़के अलावाभी जो हो, याने श्वेतांवर संप्रदायके हरएक साधुको गुजरात तथा मोटे २ शहरों परसे मोह ममत्व छोडकर गांमोंमें जहांके साधुओंका विहार नहीं और जहां साधुओंके लिये श्रावक लोक अपने यहां पधारनेकी पुकार कर रहे हैं ऐसे स्थानोंमें साधुओंका विहार होना चाहिये.

ऐसे स्थानोंमें विहार होनेसे वडाही लाभ होनेका संभव है.

नीतिकारोंका कथन है कि-अति सर्वत्र वर्जयेत्-क्षीरान्नसेभी किसीवक्त चित्त कंटाल जाता है ! वरात वगैरह जिमणवारोंमें जहां नित्यंप्रति मिष्टान्नही भोजन मिलता है वहांभी मिष्टान्नसे अरुचि होती नजर आती है ! मैं नहीं कह सकताकि यह वात कहांतक सत्य है मगर मेरा ख्याल है कि, अगर पांच सात वर्षपर्यंत साधु साध्वी अनुग्रह दृष्टिसे क्षेत्रोंके ममत्वको त्याग मरु मालवा मेवाडादिकी तर्फ सु नजर करें तो

उमीद है कि दोनोंकी पुष्टिद्वारा धर्मोन्नति अधिकसे अधिक होवे. एकतर्फ ऊपराऊपरी भोजन मिलनेसे अजीर्ण वृद्धि होती है उसकी रुकावट होजानेसे अजीर्णकी शांतिद्वारा तंदुरस्त हालतसें पुष्टि होगी. और दूसरी तर्फ भोजनका सांसा पडनेसे भूखमरेके कारण मरणप्रायः हो रहे हैं. ऊनको भोजन मिलनसे भूखमरेकी शांतिद्वारा तंदुरस्त हालतकी प्राप्तिसे पुष्टि होगी. अन्यथा याद रखना ! जितनी आजकल साधु साध्वियोंकी वेकदरी हो रही है. आयिंदाको इससे अधिकही होगी ! क्या यह थोडी वेकदरी है ? साधु साध्वियोंके शहरमें होते हुएभी कितनेक अमीर लोक तो क्या गरीबभी उस तर्फ नजर करता झिजकता है ! यह किसका प्रभाव ? एकके एकही स्थानमें ममत्व बांधकर रहनेकाही ना कि, अन्य किसीका ! क्या कभी आपने सुनाथा या सुनाहै ? कि स्वर्गवासी महात्मा श्रीमद्विजयानंद सूरि (आत्मारामजी) महाराजजी अमुक उपाश्रयमें या अमुक स्थानमेंही रहतेथे ? कवीभी नहीं. वस यही कारण समजिये जो कि उनकी निसवत कुल हिंदुस्तानके जैनोंके मुखसे एक सरीखाही उद्गार निकलता है. क्यों कि, उन्होंने कोइ अपना नियत स्थान नहीं मानाथा ! और नाही वो अमुक अमुक शेटके गुरु खास करके कहे जातेथे ! और कहे जाते हैं ! जिसका कारण उन महात्माका यह ख्यालही नहींथा कि, अमुक हमारा भक्त श्रावक और अमुक नहीं ! बलकि वो इस बातको खूब जानतेथे कि, श्रावक वगैरह के ममत्वमें जो कोइ फसता है या फसेगा उसको गुरुके बदले शिष्य बननेका समय आता है ! या अवश्य आयगा ! क्यों कि, जब किसीके

साथ ममत्वका संवंध हो जायगा तो उस वक्त उसका कहना अवश्यही मानना पडेगा ! अगर न मानेगा तो झट वो फरंट हो जायगा ! जिसका जरा दीर्घदर्शी वन विचार किया जाय तो, हम तुमको तो क्या प्रायः कुल आलमकोही अनुभव सिद्ध हो रहा है कि, आजकल प्रायः कितनेक साधु शेठोंके प्रतिवंधमें ऐसे प्रतिवद्ध हुए होंगे कि, शेठका कहना साधुको तो अवश्यही मानना पडता है ! शेठ चाहे साधुका कहना माने या न माने यह उसकी मरजीकी बात है ! तो अव आप लोक ख्याल करें, ऐसी हालतमें शेठ गुरु रहे कि साधु ? सत्य है जिन वचनसे विपरीताचरणका विपरीत फल होताही है ! इस लिये यदि साधुको सच्चे गुरु वने रहना हो तो शास्त्राज्ञाविरुद्ध एकही स्थानमें रहना छोड, ममत्वको तोड, गुरु वनना चाहते शेठोंसे मुखमोड़, अन्य देशोंके जीवोंपर उपकार बुद्धि जोड, अप्रतिवद्ध विहारमेंही हमेशह कटिवद्ध रहना योग्य है; ताकि, धर्मोन्नतिके साथ आत्मोन्नतिद्वारा निज कार्यकी भी सिद्धि हो. मैं मानता हूं कि, मेरे इस कथनमें कितनाक अनुचित भान होगा मगर, निष्पक्ष होकर यदि आप विचारेंगे तो उमीद करता हूं कि, अनुचित शद्धके नञ्का आपको अवश्यही निषेध करना पडेगा. तथापि किसिको दुःखद मालूम होतो, उसकी वावत मैं मिथ्या दुष्कृत दे, अपना कहना यहांही समाप्त करताहूं.

इस प्रस्ताव पर मुनिश्री चतुरविजयजीने अच्छी पुष्टि कीथी वाद सर्वकी सम्मतिसे यह प्रस्ताव वहाल रखा गया.

प्रस्ताव सातवां.

(७)

☞ अपने साधुओंमें अवश्य लोच करनेका जैसा रिवाज है वैसे का वैसाही रखना, अगर चक्षु प्रमुख रोगादि कारणसे, क्षुर मुंडन करवाना पड़े तो, गुरु आज्ञासे महीने महीने शास्त्रानुसार क्षुरमुंडन करवाना. लेकिन, क्षुरमुंडन करवानेवालेने चार वा छै महीने तक केश न बढाने.

प्रस्ताव आठवां.

(८)

☞ कितनेक गृहस्थी लोग उपाश्रयमें कपडा ले आते हैं और साधुओंको वोहराते हैं यह शास्त्र विरुद्ध है अतः अपने साधु गृहस्थीके मकान पर जाकर जरूरत हो उतना ले आवें किं तु, उपाश्रयमें लाया हुआ नहीं वेहरें (लेवें) *

---

* इस प्रस्तावपर सभापतिजीकी आज्ञानुसार महाराज श्रीवल्लभविजयजीने श्रावक श्राविका वर्गको उद्देश करके कहाथाकि, शास्त्रोंमें श्रावक श्राविकाको मातापिताकी उपमा दी है. जैसे मातापिता निजपुत्रको अहितसे रोक हितमें प्रेरणा करते हैं, ऐसे ही मातापिता तुल्य श्रावक वर्गको चाहिये कि, वो निजपुत्रके समान साधुकी अहितसे रक्षा कर उसके हितमें प्रवृत्ति करें. इसलिये आपको शास्त्रकारकी आज्ञानुसार जो आज्ञा सभाध्यक्षजी की तर्फसे सर्व साधुमंडलने स्वीकृत की है उसपर ध्यान देना योग्य है. हां वस्त्रकी प्रार्थना करनी आपका धर्म है, साधुको जरूरत होगी आपके मकानसे यथा योग्य गुर्वादिकी आज्ञानुसार ले आवेगा, परंतु, तुम लोक जो गठडे के गठडे ऊठा उपाश्रयमें लाकर वोहराते हो मेरा ख्याल है कि, साधुओंको एक प्रकारकी शिथिलतामें आप लोग मदद देते हो !

प्रस्ताव नवमां.

(९)

☞ वाल वृद्ध ग्लान आदि किसी खास कारणके विना, अपना साधु अपनी उपधि उपकरण गृहस्थसे न उठवावे.

प्रस्ताव दशवां.

(१०)

☞ चतुर्दशीके दिन वाल वृद्ध ग्लान (विमार) के सिवाय, अपने सव साधुओंको उपवास (व्रत) करना. (विहारमें यतना.)

प्रस्ताव ग्यारवां.

(११)

अपने साधुओंको कमसेकम सौ (१००) श्लोकका स्वाध्याय ध्यान दररोज अवश्य करना. अगर जिससे न हो सके तो वो एक नमस्कार मंत्रकी मालाही फेर लेवे.

प्रस्ताव बारवां.

(१२)

☞ सोने चांदीकी या उसके जैसी चमकवाली चश्मेकी फ्रेम (कमानी) नहीं रखनी.

प्रस्ताव ७ सातवेंसे १२ पर्यंत छै प्रस्ताव सभापतिजीकी तर्फसे आज्ञारूप जाहिर किये गयेथे. जिनका, उसीवक्त, उपस्थित हुए सर्व साधुओंने स्वीकार कर लिया.

इतना कार्य होनेके वाद द्वितीयाधिवेशनके लिये दो वजेसे चार वजे तकका टाइम मुकर्रर करके प्रथम अधिवेशन समाप्त किया गया.

" द्वितीयाधिवेशन "

बराबर दो बजे सभापति श्रीआचार्य महाराजजी मुनिमंडल सहित आविराजे. श्रावकश्राविका वा अन्य प्रेक्षक गणोंसे स्थान उसी प्रकार भर गया. सभापतिजीकी आज्ञासे मंगलाचरणपूर्वक कार्य प्रारंभ किया गया.

प्रस्ताव तेरवां.

(१३)

साधुके आचार विचारमें किसी प्रकारकी हानि न आवे इस रीतिपर अपने साधुओंको जैनोंसे अतिरिक्त अन्य लोगोंकोभी जाहिर व्याख्यानद्वारा लाभ देनेका रीवाज रखना चाहिये; तथा और किसीका व्याख्यान पबलिकमें जाहिर तरीके होता हो तो उसमें भी, द्रव्यक्षेत्र कालभावको देखकर साधुको जानेके लिये छूट होनी चाहिये. हां इतना जरूर होवे कि, हर दो कार्यमें रत्नाधिक (बड़े)की आज्ञाविना प्रयत्न न किया जावे.

मुनिराज श्रीवल्लभविजयजीने इस नियमको पेश करते हुए विवेचन किया कि, महाशयो! यह नियम जो मैंने आप साहिबोंके समक्ष पेश किया है जमानेके लिहाजसे वह बडेही महत्त्वका और धर्मको फायदा पहुंचानेवाला है. जैनेतर लोगोंमें जैनधर्मके तत्त्वोंका प्रचार करनेका

यही सुगम उपाय है. लोगोंको धर्मके तत्व समझानेका जो अपना फरज है उसके सफल करनेका अत्युत्तम समय प्राप्त हुआ है. आप जानते हैं कि, अपनी सुस्तीके कारण कहो, या वेदरकारीसे कहो, अन्य जिस किसीका दाव लगा उसने अपने तत्वको समझाकर अपने पीछे लगा लिया ! जिनमें कितनेक लोग तो जैनधर्मके तत्वोंसे अनभिज्ञ होनेसेही अन्यके पीछे लग जाते हैं ! और कितनेक एक दूसरेकी देखादेखी ! यही हाल अवभी चल रहा है तथापि जैनोंकी आंखें नहीं खुलतीं ! कितनेक लोग जैन धर्मके तत्वको विना समझे कुछ अन्यका अन्यही पुस्तकोंमें लिखकर विना किसीको दिखाये अपनी मरजीमें आया वैसा ऊतपटांगसा छपवाकर एकदम जाहिर करदेते हैं ! जिसका परिणाम जैनधर्मपरसे लोगोंकी श्रद्धा ऊठ जानेका हो जाता है ! इस लिये यदि जाहिर व्याख्यानद्वारा जैनधर्मके तत्व लोगोंके सुननेमें आवें तो आशा की जाती है कि, घने लोगोंको अपनी भूल सुधारनेका मौका मिलजावे.

यह कोइ वात नहीं है कि, आप लोग वाजारमें खडे होकर ही सुनावें ! वेशक ! जिस प्रकार उपाश्रयमें वैठकर सुनाते हैं उसी तरह सुनावें, मगर स्थान ऐसा साधारण होवे कि जहां आनेसे कोइभी झीजक न जावे ! यद्यपि उपाश्रय ऐसा साधारण स्थानही होता है क्यों कि, उसपर किसीकी खास मालकियत नहीं होती है, तथापि लोगोंमें खास करके यही वात प्रचलित हो रही है कि, उपाश्रय अमुक एक व्यक्तिका है. हम वहां किसतरह जावें ? कदापि गये और कि-

सीने कह दिया कि, क्यों साहिब ! आप यहां क्यों आये ? इत्यादि कइ प्रकारकी कल्पनायें कर घने भोले जीव अलभ्य लाभसे वंचित रहते हैं ! तो उनको ऐसा समयही न मिले इस प्रकारकी व्यवस्थाका करना जानकार श्रावकोंका कर्त्तव्य समझा जाता है.

मतलब कि, जिस तरह हो शके अपनी वृत्तिकी रक्षापूर्वक जाहिर व्याख्यानद्वारा लोगोंको फायदा पहुंचानेका और अन्य समाजोंमें जाकर स्वयं किसी न किसी बातका फायदा लेनेका या समाजस्थ सभ्य लोगोंको फायदा देनेका ख्याल अवश्य रखना चाहिये. ऐसा होनेसे पूर्ण आशा है कि, मात्र उपाश्रयमेंही बैठकर केवल श्राद्ध वर्गके आगे उपदेश दिया जाता है उससे कइगुणा अधिक लाभ होगा. यदि एक जीव-कोंभी शुद्ध धर्मके तत्वका श्रद्धान होजावे तो मेरा ख्याल है कि सारी जिंदगीका दिया उपदेश सफल हो जावे ! बाकी जो श्राद्ध वर्ग है सो तो है ही. परंतु उसमेंभी विद्याभ्यासकी खामीके कारण परमार्थको समझनेवाले प्रायः थोडेही निकलेंगे ! घने तो केवल जी महाराजही, कहनेवाले होगें यह बात कोइ आप लोगोंसे छिपी हुई नहीं है; इस लिये, जमानेकी तर्फ दृष्टि करनी अपना फरज समझा जाता है. शास्त्रकारोंकाभी फरमान द्रव्यक्षेत्रकाल भावानुसार वर्त्तन करनेका नजर आता है. ऐसा होनेपरभी यदि जमानेको मान न दिया जावे तो मैं कह सकताहूं कि उसने शास्त्र या शास्त्रकारोंको मान नहीं दिया !

आप जानते हैं आजकलका जमाना कैसा है ? आजकलका

जमाना प्रायः सुधरा हुआ और सत्यका ग्राहक हो रहा है. सैंकडों मनुष्य असली शुद्ध तत्वकी चाहनावाले आपको मिलेंगे मगर शांतिपूर्वक उन्हें समझानेकी जरूरत है! मेरा कहना यह नहीं मानता है, इसलिये यह नास्तिक है! इसके साथ बात करनी योग्य नहीं है! ऐसी ऐसी तुच्छताको अपने दिलमें स्थानही नहीं देना चाहिये! जबतक अगलेके दिलकी तसल्ली न हो वो एकदम आपके कहनेको कैसे स्वीकार कर सकता है? यदि आपके कथनको सत्यही सत्य मानता चला जावेतो उसका समझानाही क्या? वोतो आगेही श्रद्धालु होनेसे समझा हुआ है! मैं मानताहूं कि, भगवान् श्रीमहावीरस्वामीजी तथा श्रीगौतमस्वामीजीका बयान ऐसे मौकेपर ख्याल करना अनुचित नहीं समझा जायगा. श्रीगौतमस्वामी श्रीमहावीरस्वामीके पास किस इरादेसे आयेथे? परंतु श्रीमहावीरस्वामीके शांत उपदेशसे उनकी शंकाओंका योग्य समाधान होनेसे सत्य वस्तु झट ग्रहण करली. यहां श्रीमहावीरस्वामीने यह ख्याल नहीं किया है कि, यह वादी बनकर आया है इससे क्या बोलना? बलकि हे इंद्रभूते! हे गौतम! इत्यादि मीष्ट वचनोंसे आमंत्रण देकर उनको समझाया. जबकि, हमतुम वीरपुत्र कहाते हैं तो वीर अपने पिताश्रीका अनुकरण करना हम तुमको योग्य है नकि, अननुकरण! इस लिये शांतिके साथ अनुग्रह बुद्धिसे यदि उन लोगोंको धर्मके तत्व तथा धर्मका रहस्य समझाया जावे तो मैं यकीन करताहूं कि आपको बड़ाही भारी लाभ होवे.

महाशयो! प्रतापी गवर्मींटके शांतिमय राज्यमें यह

शांतिमय जमाना वहते गंगाके निर्मल पानीकी तरह जितना जिससे पिया जावे पी लो ! कोई रोकनेवाला नहीं ! हरएक धर्मवाला अपने अपने धर्मके तत्वोंको समझानेके लिये जगह जगह जाहिर व्याख्यान देता नजर आ रहा है ! अगर इससे वंचित है तो कुछ कदरे केवल जैनसमाजही है ! अपने पूर्वर्षि महात्माओंने जो लाखों जीवोंकों जैनधर्मके अनुयायी वनाया है, वो केवल उपाश्रयमेंही वैठकर नहीं वनाया; किंतु राज-दरवारआदि अन्यान्य स्थानोंमें उपदेश देकरकेही वनाया है. यदि वो महात्मा आजकलकी तरह उपाश्रयमेंही वैठे रहतेतो, कइएक राजा महाराजा सामंत मंत्री शेठ शाहुकार व अन्य लाखों मनुष्य जैनधर्मी किस तरह होते ? भगवान् महावीर-स्वामीने जैनधर्मका कंट्राक्ट (ठेका) किसी खास अमुक व्यक्ति या जातिको नहीं दिया है किंतु उन्होंनेतो दुनियाके उपकारार्थ धर्म फरमाया है ! जैनधर्म अमुक जाति या अमुक देशका नहीं है ! जैनधर्म सारे जगत्का धर्म है ! जरा चारों ओर विचारदृष्टिको फिराकर देखोंगे स्वतः मालूम हो जायगा ! दयाकी वावत जैनधर्मकी छाप हरएक दुनियाके धर्म-पर कैसी जवर वैठी है ? जो लोग पक्षपातके गेहरे गढेमें गिरे हुए हैं उनकोभी अपनी कलम व ज़वान मुवारिकसे जाहिर करना पडता है कि, दयाकी वावतमें जैन सवसे आगे वढा हुआ है ! मान्य मुनिवरो ! यदि इसी प्रकार जैनधर्मके रहस्य व तत्वोंका भली प्रकार वर्णन किया जावे तो क्या लोगोंको असर कुछभी न होवे ? नहीं नहीं अवश्यही होवे. इसलिये "गइ सो गइ अव राख रहीको" इस कहावत मूजिव आगेके

लिये हुशियार होनेकी जरूत है. मैनें आपका वहुत समय लिया है कृपया उसे दरगुजर कर, जो कुछ प्रकरणके असंगत या अनुचित छद्मस्थताके कारण कहा गया हो उसकी वावत सुद्धांतःकरणपूर्वक मिथ्या दुष्कृत दे समाप्त करता हुआ, अपना प्रस्ताव पुनः मुनिमंडलके समक्ष पेश कर वैठ जाताहूं.

इस प्रस्तावके अनुमोदनपर मुनिश्री विमलविजयजीने कहाकि, मान्य मुनिवरो! मेरे परमोपकारी गुरुजी महाराजने जो यह प्रस्ताव आप लोगोंके समक्ष विवेचनपूर्वक उपस्थित किया है इसपर कुछ कहनेके लिये मैं सर्वथा असमर्थ हूं! क्यों कि कहां तो सूर्य! और कहां खद्योत! कहां समुद्र! और कहां जलविन्दु! इसी तरह कहां तो आपका कथन! और कहां उसपर मेरा कुछ कहना! इस लिये मैं आपके प्रस्तावका अक्षर अक्षर सन्मानपूर्वक स्वीकार करता हुआ इतनी प्रार्थना करता हूं कि, जाहिर व्याख्यान देनेका अभ्यास जिनका हो उनके पाससे थोडा २ समय लेकर हमेशह सीखना चाहिये. और वड़ोंकोभी कृपा कर उन्हे वोलनेका थोड़ा थोड़ा अभ्यास कराना चाहिये. ताकि एक दिन आम खास (पवलिक) में वेधड़क व्याख्यान (भाषण–लैक्चर) दे सके! कोई कितनाहीं पढ़ा लिखाहो तोभी जिसे वोलनेका अभ्यास नहीं है वह हरगिजभी नहीं वोल सकेगा! जाहिर व्याख्यानोंसे क्या लाभ है! वह थोडेही समयमें आपको हस्तगत होगा! वाद इस विवेचनके सर्वकी अनुमतिसे यह प्रस्ताव पास किया गया.

प्रस्ताव चौदवां.

(१४)

अपने साथमें चौमासा करनेवाले या विचरनेवाले साधुके नामका पत्र, आवे तो उसको खोलकर बांचनेका अधिकार मंडलीके वड़े साधुकोही है. यदिवो योग्य जाने तो उस साधुको समाचार सुनावे, या पत्र देवे, उनका अखतियार है. इसलिये वडेके सिवाय दूसरेको पत्रव्यवहार नहीं करना चाहिये. कदापि अपनेको कोई कहींसे जरूरी समाचार मंगवाना होतो, जो अपने साथ वड़े हो उनकेद्वारा मंगवाना उचित है.

यह प्रस्ताव मुनिश्री ललितविजयजीने पेश कियाथा जिसकी पुष्टि मुनिश्री विमलविजयजी मुनिश्री तिलकविजयजी तथा मुनिश्री कपूरविजयजीने अच्छीतरह कीथी. अंतमें सबकी राय मिलनेपर प्रस्ताव पास किया गया.

प्रस्ताव पंद्रवां.

(१५)

जैनेतर कोईभी अच्छा आदमी जीव दया आदि धर्मसंबंधी उपदेश वगैरहका उद्यम करता हो तो, उसकोभी अपने साधुओंने यथाशक्ति मदद करनेका प्रयत्न करना.

यह प्रस्ताव प्रवर्त्तक श्रीकांतिविजयजी महाराजने पेश करते हुए मालूम कियाथाकि, अपना धर्म दयामय है. 'अहिंसापरमोधर्मः' यह जैनका अटल सिद्धांत है !

दयाके लिये जो काम हमें खुद करने चाहिये वह कार्य अगर कोई दूसरा करता हो तो, अपनेको यह समझना चाहियेकि, यह हमाराही कार्य करता है; इस लिये ऐसे मनुष्योंको मदद पहुंचानेका ख्याल हमको हमेशह रखना चाहिये.

इसपर मुनिश्री वल्लभविजयजी महाराजने पुष्टि करते हुए कहाथा कि, श्रीमान् प्रवर्तकजी महाराजजीने जो कुछ "जैनेतर धर्म्मोद्यत पुरुषको यथाशक्ति मदद पहुंचानेका अपने साधुओंको ख्याल रखना चाहिये" फ़रमाया है, वह अक्षरशः सत्य है. यह अपना अवश्यही कर्तव्य है.

मान्य मुनिवरो ! मैं यकीन करता हूं कि, आपके उपदेशका परमार्थ मुनिमंडल तो समझही गया होगा; परंतु जो अन्य रंग विरंगी पगडियांवाले प्रेक्षकगण उपस्थित हैं. उनमें शायद कोई न समझा हो तो, वो समझ लेवें कि, साधुओंकी मददसे यही मुराद है कि, योग्य पुरुषोंको उपदेशद्वारा योग्य प्रबंध जहांतक हो सके करा देवें. साधुओंके पाससे उपदेशके सिवाय और धनधान्यादिकी मदद होही नहीं सकती ! क्यों कि साधुको रुपैया पैसा रखना जैनशास्त्रका हुकम नहीं है इतना ही नहीं बल कि, निष्पक्ष हो विचार किया जावे तो, किसी धर्मशास्त्रमेंभी साधुको धन रुपैया पैसा रखनेकी आज्ञा नहीं ! जैन दृष्टिसे या पूर्वाचार्योंकी दृष्टिसे देखा जाय तो पैसा रखनेवाला दर असल साधुही नहीं माना जाता ! लोगोंमेंभी प्रायः सुननेमें आता है कि, धन गृहस्थका मंडन है

और साधुका भंडन है ! गृहस्थके पास कौडी न हो तो वो कौडीका और साधुके पास कौडी हो तो वो कौडीका !

अंतमें सर्वकी सम्मति अनुसार यह नियम स्वीकार किया गया.

प्रस्ताव सोलवां.

(१६)

☞ अहमदावादके मोहनलाल लल्लुभाई नामक मनुष्यके निकाले हुए हेन्डबिलमें, अपने परमपूज्य परमोपकारी जगद्विख्यात आचार्य महाराज श्रीमद्विजयानंद सूरि तथा प्रवर्त्तक श्रीकांतिविजयजी महाराज तथा मुनि वल्लभविजयजी पर अश्लील आक्षेप किये हैं ! जिससे पंजाब वगैरह देशोंके श्रावक वर्गका दिल अत्यंतही दुःखी हुआथा ! उस वक्त अपने साधुओंने और खास कर प्रवर्त्तकजी महाराज तथा वल्लभविजयजीने शांततापूर्वक उनको समझाकर शांत किया और झगडेको बढने न दिया ! उसका यह संमेलन अनुमोदन करता है और यदि कोई समय भविष्यमें ऐसा प्रसंग आवेतो ऐसेही शांतता रखनेके लिये यह सम्मेलन सम्मति देता है.

इस प्रस्तावके उपस्थित होते हुए पन्यास श्रीसंपतविजयजी महाराजने कहाथा कि, साधुओंका यही धर्म है कि, अगर कोई गालियां दे या इससेभी आगे बढकर कोई शरीर पर चोट पहुंचाने आवे तोभी शांति रखनी चाहिये. जब

साधु होकरभी शांति न रखी तो वो साधुही काहेका? साधारण समयमें तो सवही प्रायः शांतता रखते हैं, लेकिन ऐसे विकट प्रसंगमें शांतता रहे, तोही साधुपनेकी परीक्षा होती है! पूर्वोक्त हेन्डविल, येभी एक ऐसाही प्रसंग प्रवर्त्तक श्री कांतिविजयजी वगैरहके लियेथा! उनकी तथा हमारे पूज्यपाद गुरुवर्य श्रीआत्मारामजी महाराज कि, जिनके लिये तमाम हिन्दुस्तानके जैनही नहीं वल कि जैनेतर लोगभी मगरूर हैं उनके निसवतभी विनाही कारण मगजभी फिर जाय ऐसे अश्लील शद्वोंका उपयोग किया है! तोभी श्री प्रवर्त्तकजी महाराज तथा वल्लभविजयजीने शांतता धारण करके पंजावादि देशोंके श्रावकोंके दुखे हुए दिलोंकोभी शांत किया.+ जिससे वढता क्लेश अटक गया. इससे अपनेको यही सार लेना चाहिये कि अपनेकोभी ऐसे प्रसंग पर शांतता रखनी चाहिये!

इस पर पन्यास श्रीदानविजयजी महाराजने अच्छी पुष्टि कीथी.

+ सभ्य वाचकवृंद! मुनियोंके क्षमा धर्मकातो अनुभव आपको प्रत्यक्षही हो गया! परंतु ऐसे ऐसे पूज्य महात्माओंकी वावत खोटी नजर करनेवालेको परभवमें क्या सजा होगी? वहतो अतिशय ज्ञानीही जानते हैं; मगर पापका फल थोडा, या वहुत, इसलोकमेंभी मिल जाता है. इस शास्त्रीय नियमानुसार विनाशकाले विपरीत वुद्धिः इस मुजिव क्षमाप्रधान साधुओं पर हमला करता करता कितनेक गृहस्थोंपरभी मोहन लल्लुने अपने हेंडविलमें अनुचित्त शद्वोंसे हमला किया! जिसका तात्कालिक फल अमदावादकी अदालतसे तीन प्रेसवालोंको और मोहन लल्लुको सजा मिलचुकी है! (लेखक.)

प्रस्ताव सत्रहवां.

(१७)

☞ नवीन साधुको जवतक पांच प्रतिक्रमण, दश वैकालिकके चार अध्ययन, जीवविचार, नव तत्व और दंडक अर्थ सहित न हो जावे, तवतक व्याकरणआदि अन्य अभ्यासमें नहीं जोड़ना.

प्रस्ताव अढारवां.

(१८)

☞ साध्वियों और गृहस्थियोंके पास कपडे न धुलवानेका जो रिवाज अपनेमें है, उसको वैसाही कायम रखना. और अन्य कोई मुनि उपरोक्त काम करता हो तो उसको मिष्ट भाषणद्वारा हितशिक्षा देकर उस कामसे छुडानेका प्रयत्न करना.

प्रस्ताव उन्नीसवां.

(१९)

☞ आजकल प्रायः कितनेक सामान्य साधुभी उंची जातके और वहु मूल्यके धुस्से वगैरह कपड़े रखते नजर आते हैं! इस रिवाजको यह सम्मेलन नापसंद करता है. और प्रस्ताव करता है कि, अपने साधुओंको आजपीछे पंजावी या वीकानेरी कंवल अथवा वैसाही और प्रकारका कम कीमतका कंवल काममें लाना चाहिये.

नंवर १७-१८ और १९ येह तीन प्रस्तावभी सभापतिजीकी तर्फसे वतौर आज्ञाके सूचन किये गयेथे. जिनको सर्व मुनिमंडलने खुशीके साथ स्वीकार करलिया.

प्रस्ताव वीसवां.

(२०)

☞ जिसको दीक्षा देनीहो उसकी कमसे कम एक महिनेतक यथाशक्ति परीक्षा कर उसके संवंधी माता, पिता, भाई, स्त्री आदिको रजिष्टरी पत्र देकर सूचना कर देनी. और दीक्षा लेनेवालेसेभी उसके संवंधियोंको जिसवक्त वो अपने पास आवे उसी समय खवर करवा देनेका ख्याल रखना.

यह प्रस्ताव प्रवर्त्तकजी श्रीकांतिविजयजी महाराजने पेश करते हुए कहाथा कि, प्रायः अपने साधुओंमें आज तक दीक्षा संवंधी कोइ खटपट या झगडा ऐसा नहीं उठा है. जिससे हमें कोई आदमी कुछ कहभी नहीं सकता. तोभी एक सामान्य नियम के कायम करनेसे भविष्यमें हमको चिंता करनेका कारण न रहेगा. यह नियम ऐसा है कि, जिससे धर्मकी हीलना होती वंध हो जायगी. कइ एक वक्त दीक्षा लेनेवालेके सगेसंवंधियोंको वड़े क्लेशका कारण हो पडता है. और उससे निकम्मे खर्चमें उन्हें उतरना पडता है ! आजकल कोई दीक्षा लेनेवाला किसीके पास आता है तो, कितनेक साधु प्रायः उसकी परीक्षा किये वगैर झट दीक्षा दे देते हैं, जिसका परिणाम ऐसा वुरा होता है कि, लोकोंकी धर्ममें अप्रीति हो जाती

है ! एक ऐसा बनाव मेरे ध्यानमें है कि, किसीने एक शख-सको दीक्षा दे दी, वह चौथे दिनही उपाश्रयमेंसे अच्छे २ चंदरवे पूठिये तथा पुस्तक वगैरह जो हाथ आया लेकर रातोरात रफूचक्कर हो गया ! यह विना परीक्षा किये काही फल है ! पूर्वोक्त बनाव अपने संघाडेमें नहीं बना तोभी अप-नेको यह नियम जरूर करना चाहिये कि, कमसे कम एक महीना तक तो उसकी परीक्षा अवश्य करनी. बादमें योग्य मालूम होतो दीक्षा देनी. ऐसा होनेसे दीक्षा लेनेवालेके चाल-चलनका पता लग जायगा. और उसको साधुओंकी रीति-भांतिकाभी प्रायः कितनाक ज्ञान हो जायगा. साथही इसके इस बातकीभी जरूरत है कि, जब कोई दीक्षा लेने वास्ते आवे तो उसके संबंधियोंको सूचना कर देनी चाहिये. जिससे कि कोई प्रकारके क्लेशद्वारा धर्ममें हानि न पहुंचे.

इस प्रस्तावका मुनिश्री वल्लभविजयजी, मुनिश्री दौलत-विजयजी, मुनिश्री कीर्तिविजयजी, मुनिश्री लावण्यविजयजी, मुनिश्री जिनविजयजीने अनुमोदन कियाथा.

यह प्रस्ताव सर्वकी सम्मतिसे पास किया गया. बाद इसके समय हो जानेसे दूसरे दिनके लिये सूचना देकर कार्य बंद किया गया.

———

" तृतीयाधिवेशन. "

ता. १४ जून १९१२ शुक्रवार प्रातःकाल आठ बजे सभापतिजी वा अन्य मुनिमंडलके प्रेक्षक गण सहित उपस्थित हो जानेपर सभापतिजीकी आज्ञानुसार मंगलाचरणपूर्वक तृतीय अधिवेशनका कार्य प्रारंभ हुआ.

प्रस्ताव इक्कीसवां.

(२१)

☞ साधुओंके या श्रावकोंके भीतरी झगडोमें अपने साधुओंको शामिल न होना चाहिये. कोई धार्मिक कारणसे शामिल होनेकी आवश्यकता होतो आचार्य महाराजकी आज्ञा मंगवाकर उसके मुताबिक वर्त्ताव करना.

यह प्रस्ताव प्रवर्तक श्री कांतिविजयजी महाराजने पेश किया और मुनिश्री मानविजयजी तथा मुनिश्री उत्तमविजयजीने अनुमोदन किया. बाद सर्वकी सम्मातिसे यह नियम पास हुआ.

प्रवर्त्तकजी महाराजने प्रस्ताव पेश करते समय कहाथा कि, इस नियममें विशेष विवेचनकी कोई जरूरत नहीं मालूम होती ! यह स्पष्टही है कि, साधुका या गृहस्थका चाहे जिसका टंटा हो उसमें पडनेसे अपने पठन पाठन ज्ञान ध्यानमें अवश्य नुकसान होगा ! दूसरा ऐसे झगडोमें पडनेसे पक्षपाती या अविश्वासु होनेका संभव है ! अतः जहां ऐसे ऐसे टंटे झगडेका

कारण आपड़े वहां यदि अपनी शक्ति हो और शांति होती नजर आवे तो उसके समाधान करनेका उद्योग करना! वरना किनारा ही करना योग्य है. मगर किसी पक्षमें शामिल होकर साधुताको दूषित करना योग्य नहीं है!

प्रस्ताव बाइसवां.

(२२)

☞ एक गुरुके परिवारके साधुओंमेंही जैसा चाहिय वसा मेल नजर नहीं आता तब यह कैसे आशा की जा सकती है कि, भिन्न गच्छके तथा भिन्न गुरुओंके साधुओंमें मेल रहे! इस प्रकारकी स्थिति हमारे आधुनिक साधुओंकी है! इसको देख कर यह सम्मेलन अत्यंत शोक प्रदर्शित करता है और प्रस्ताव करता है कि, ऐसे कुसंगसे साधु मात्रका जो धर्मकी उन्नति करनेका मूल हेतु है वह पूर्ण होता हुआ दृष्टिगोचर नहीं आता! अतः अपने साधुओंको वही काम करना चाहिये जिससे कि यह कुसंप दूर हो.

इस प्रस्तावके उपस्थित होते हुए प्रवर्तक श्रीकांतिविजयजी महाराजने कहाथा कि, सामान्य तया हम साधु कहलाते हैं तो क्षमागुण अपने अंदर होनाही चाहिये. यदि क्षमा नहीं तो साधु पनाही क्या! जहां क्षमा गुण है वहां कुसंप रहही नहीं सकता! परंतु इस समय तो उलटाही नजर आता है! जितना संप अपने अंदर चाहिये उतना दृष्टिगोचर नहीं होता! इसी कारण धर्मोन्नतिके बडे २ कार्य वीचमें लटक

रहे हैं ! यह तो आप जानतेही हैं कि, कोईभी कार्य हो विना संपके पूरा नहीं होता. विना संप कभी किसीकी फतह न हुई है और न होगी. इस लिये आपसमें संपका होना वहुत जरूरी है.

एवं मुनिराज श्रीवल्लभविजयजीने श्रीप्रवर्त्तकजी महाराजके विवेचनका अनुमोदन करते हुए कहा कि, संपके विना किसी कार्यकीभी सिद्धि नहीं होती. जव कि अपनेमें संपथा तवही संम्मेलनरूप महान् कार्यकी हमें सफलता प्राप्त हुई है.

यदि अपनेमें संप न होता तो दूर दूरसे अनेक कष्ट सहन कर आनेवाले योग्य मुनिराजोंके अमूल्य दर्शनोंका होना और शाशनकी उन्नतिके करनेवाले अनेक धार्मिक कार्य जो कि इस सम्मेलनद्वारा प्रस्तावित कर पास किये गये हैं या किये जायँगे उनका होना अति दुर्घट था !

मान्य मुनिवरो ! संसारमें संप एक ऐसा पदार्थ है कि, जिसके प्रभावसे साधारण स्थितिकी जातियेंभी आज उन्नतिके उच्च आसनपर वैठी हुई संसार भरके लिये संपकी शिक्षाका उदाहरण वन रही हैं ! संपकी योग्यताका यदि गंभीर दृष्टिसे विचार किया जाय तो यह एक ऐसा सूत्र है कि, इसके नियमको उल्लंघन करनेवाला कभी कृतकार्यता (कामयावी–सिद्धि) का मुख देखताही नहीं ! इसके नियमका शासन स्याद्वाद मुद्राकी तरह संसारके प्रत्येक पदार्थमें दृष्टिगोचर हो रहा है ! आप अधिक दूर मत जाइये जरा

अपने हाथकी तर्फही ख्याल करें ! एक एक अंगुलिके भिन्न भिन्न कार्यमें सर्व अंगुलिएँ एक समान होती हुईभी एक अंगुलिका काम दूसरी अंगुलि नहीं कर सकती है ! जैसे कि, पांचोही अंगुलिओंमेंसे विवाहादि प्रसंगमें तिलक करनेका काम जो कि अंगुष्टका है वह काम अन्यसे नहीं किया जाता. ऐसेही यदि किसीको खिजानेके लिये जैसे अंगूठा खड़ा किया जाता है और उसको देख कर सामना आदमी झट खीज जाता है यह कामभी और अंगुलि नहीं कर सकती ! अंगुष्टके साथकी अंगुलि जैसे बोलतेको चुप करानेके लिये, या किसीको तर्जना करनेके लिये काम आ सकती है, और अंगुलि इस संकेतका ज्ञान कदापि नहीं करा सकती ! पांचोही अंगुलिओंको दो इधर और दो इधर ऐसे विभागमें बांटनेका काम जैसा मध्यमा-विचली अंगुलि कर सकती है अन्य अंगुलिसे वो काम कदापि नहीं हो सकता ! इष्टदेवके पूजनमें इष्टदेवको तिलक करनेका काम अनामिका चौथी अंगुलिका है वो काम अन्य अंगुलिसे नहीं किया जाता ! इसी प्रकार कनिष्टिका पंचमी अंगुलिका काम स्कूलमें मास्तरसे लघुनीति-पेसाव-करनेको जानेके लिये छुट्टी मांगनेका है वो काम अन्य अंगुलिसे नहीं हो सकता ! या मुद्रिका पानेका ख्याल प्रायः जितना कनिष्टिकाका होता है इतना अन्य किसी अंगुलिका नहीं ! जिसका कारणभी यही मालूम देता है कि, चलते हुए आदमीकी यही अंगुलि खुली रहतीहै. औरतो प्रायः दबाणमें आजाती हैं. तो दूरसे मुद्रिकाकी चमकभी मालूम नहीं हो सकती ! एवं पांचोंही अंगुलियें निज निज कार्यके करनेमें समर्थ होनेसे अपने स्थानमें सबही

बड़ी हैं ! इस मुजिब चाहे कोइ छोटा हो या बड़ा हो, अमीर हो या गरीब हो, साधु हो या गृहस्थ हो अपने अपने अधिकारमें अपने अपने स्थानमें निज निज कार्यके करनेमें सबही वडे हैं ! कसी और सूईकी तर्फ ख्याल किया जावे ! सीनेके काममें-सूईही वड़ी मानी जायगी और खोदनेके काममें कसीही वड़ी मानी जायगी ! परंतु जो काम सबका साधारण है, वो काम तो सबके एकत्र होनेसेही हो सकता है. जैसा कि पांचोंही अंगुलियोंके मिलनेसे पैदा हुए ‘ थप्पड ’ का काम जब पांचोंका मेल होता है तबही होता नजर आता है ! यदि पांचोंमेसे एकभी अंगुलि जुदी रहे तो थप्पडका काम नहीं हो सकता ! अथवा पांचों अंगुलियोंके मिलनेसेही दाल चावल आदिका ‘ ग्रास ’ ठीक ठीक उठाया जाता है, यदि पांचोंमेंसे एकभी अंगुलि वराबर साथमें ना मिले तो ग्रास नहीं उठाया जाता ! जिसमेंभी वड़ी अंगुलियोंको संकुचित होकर छोटीके साथ मिलकर काम करना पड़ता है ! यदि वड़ी अंगुलियें संकुचित न होवे तो उनके मेलमें फरक पड़जानेसे निर्धारित कार्यकीभी सिद्धि यथार्थ नहीं होती.

सभ्य श्रोतृगण ! आपने देखा, संप कैसी वस्तु है ! पूर्वोक्त हस्तांगुलिके दृष्टांतसे केवल संपकी ही शिक्षा लेनी योग्य है, इतनाही नहीं; वलकि, जैसे ग्रास ग्रहण करनेके समय वड़ी अंगुलियोंके संकुचित हो, छोटीके साथ मिलकर काम करनेसे कार्यसिद्धि होती है, ऐसेही कार्यसिद्धिके लिये वड़े पुरुषोंको किसी समय गंभीर वन छोटोंके साथ मिलकर ही काम करना योग्य है. नाकि. अपने वडप्पनके घमं-

डमे आकर काम बिगाड़ना योग्य है ! नीतिकारोंका कथन है-स्वार्थभ्रंशोहि मूर्खता-अपने मानमें तना स्वार्थका नाश करना, आला दर्जेकी मूर्खता है ! मानके करनेसे प्रीतिका नाश होता है. शास्त्रकारोंकाभी फरमान है कि,-माणो विणय-भंजणो-मान-विनय नम्रता गुणको नाश करताहै ! जहां नम्रता नहीं वहां प्रीतिका क्या काम ? और विना प्रीतिके संपका तो नामही कहां ? जब संप नहीं तो फिर बस ! कोई कैसाही उत्तम कार्य करना क्यों न चाहे कदापि सिद्ध होनेका संभव नहीं ! अतः संपकी अतीव आवश्यकता है. " संप त्यां झंप " इस गुजराती कहावतमें कितनी गंभीरता है उसका विचार कर अपने हृदय कमलसे कदापि इसको पृथक् नहीं होने देना चाहिये !

दुनियाके लोग करामात करामात पुकारते हैं मगर मेरी समझमें-जमातही करामात है ! जमात (समुदाय) से अशक्य शक्य हो जाता है ! जरा ख्याल करिये ! कीड़ी कितना छोटा जानवर है; परंतु जमात मिलकर एक वडे भारी सांपको खींचनेकी ताकत पैदा करसके है ! तंतुमें वो सामर्थ्य नहीं परंतु तंतु समुदायसे हाथी बांधा जाता है ! इसलिये संपरूप सूत्रसे सबको ग्रथित होनेकी जरूरत है. संपरूप सूत्रसे बंधे हुएभी इतना ख्याल अवश्य करना योग्य है कि, जैसे ' झाड़ू ' जब तक दोरीके बंधनमें होता है तबतकही कचवर (कचरे)को निकाल सफाइके कामको कर सकता है. परंतु जब उसका बंधन छूट जाता है या टूट जाता है तो और कचवरका निकालना तो दूर रहा उलटा वो आपही कचवर बन मकानको

गंदा करदेता है ! इसी प्रकार यदि हम संपसे बद्ध होंगे तो कई प्रकारकी कुरीतिरूप कचवरको निकाल सुधारारूप सफाइको करसकेंगे ! वरना स्वयंही कचवर बनने जैसा हो जायगा !

प्रस्ताव तेइसवां.

(२३)

☞ आजकल कितनेक साधुलोग शिष्य बनानेके लिये देशकालके विरुद्ध वर्त्ताव करते हैं, जिससे जैनधर्मकी अवहीलना होनेके अनेक प्रसंग प्राप्त होते हैं. इसी प्रकार मुनिओंकोभी कभी २ अनेक कष्ट उठाने पड़ते हैं. इस लिये यह सम्मेलन इस प्रकार दीक्षा देकर शिष्य करनेकी पद्धतिको और इस प्रकार दीक्षा देनेवाले और लेनेवालेको अत्यन्त असन्तोषकी दृष्टिसे देखता है और यह मंडल प्रस्ताव करता है कि, अपने समुदायके साधुओंमेंसे किसीको ऐसी खटपटमें नहीं पडना चाहिये. और जो कोई मुनि ऐसी खटपटमें पड़ेगा उसके लिये आचार्यजी महाराज सख्त विचार करेंगे.

इस प्रस्तावके उपस्थित होनेपर मुनिश्री चतुरविजयजी महाराजने कहाथा कि, आजकल इस प्रकारकी दीक्षासे साधुओंकी हदसे ज्यादह निंदा होती सुननेमें आती है ! जिससे कितनेक जैन या जैनेतर लोकोंके मनमें साधुओंपर अप्रीति होती जाती है ! कितनीक जगह तो विचारे श्रावकोंको सैंकड़ो बलाकि हजारोंके खर्चमें उतरना पड़ता है ! जो कि, साधुओंके लिये

विचारणीय है ! तथा ऐसी खटपटमें पड़नेसे साधुको अपने ज्ञान ध्यानसे चूक रातदिन प्रायः आर्त ध्यान करनेका मौका आ पडता है ! इतनाहीं नहीं वलकि, श्रावकोंकी वा अन्य लोगोंकी खुशामद करनेका समयभी आ जाता है ! और कभी झूठभी बोलनेका प्रसंग आ पड़े तो आश्चर्य नहीं ! इत्यादि रोकनेके लिये इस नियमकी जरूरत है. यदि सत्य कहा जावे तो ऐसी खटपटमें साधुओंको उत्तेजन देनेवाले श्रावक लोकही होते हैं ! जो कभी श्रावक लोक ऐसी वातमें द्रव्य वगैरहकी सहायताद्वारा मदद दे उत्तेजन न देवें तो, ऐसी खटपटका कभी जन्मही न होने पावे ! इस लिये इस वातका श्रावकों-कोभी ख्याल करना चाहिये कि, देशकाल विरुद्ध दीक्षा देने-वाले साधुको मदद न करें.

प्रस्ताव चौवीसवां.

(२४)

☞ नामदार शाहनशाह पंचम ज्यौर्जकी शीतल छायामें वीरक्षेत्र (वडोदा) जहां कि, श्रीमंत महाराजा सयाजीराव गायकवाड सरकार विराजते हैं उनके पवित्र राज्यमें धर्म्मो-न्नति निमित्त यह सम्मेलन आनंदके साथ समाप्त हुआ है. इस लिये यह सम्मेलन परमात्मासे प्रार्थना करता है कि, उन्होंके इस पवित्र राज्यमें ऐसे धर्म कार्य हमेशांही निर्विघ्नतासे होते रहें और सर्वदा ऐसी ही शांति वनी रहे !

। उपसंहार ।

इसके अनंतर सभापतिजीका व्याख्यान (आपकी आज्ञासे मुनिराज श्रीवल्लभविजयजी महाराजने) जो पढ़कर सुनाया था वह नीचे दर्ज किया जाता है.

" सभापतिजीका व्याख्यान. "

मान्य मुनिवरो ! आपकी शुभ इच्छासे मुनिसम्मेलनका कार्य निर्विघ्नतापूर्वक समाप्त हुआ, आपके प्रशंसनीय उत्साहको देखकर मुझे बहुतही आनंद हो रहा है ! मुझे पूर्ण आशा है कि, भविष्यमेंभी आपके सद् उद्योगसे ऐसे ही महत्वशाली और धर्म उन्नतिके जनक कार्य होते रहेंगे !

महाशयो ! आजकल एकताकी बहुत खामी है ! पिता पुत्रके बीच, गुरु शिष्यके अंदर, भाई भाईके मध्यमे, स्त्री पुरुषके दरमियान जिधर देखो उधरही प्रायः मतभेद दिखाई देता है ! परंतु अपने अर्थात् पूज्यपाद श्रीमद्विजयानंद सूरिश्री आत्मारामजीके शिष्य समुदायमें इसका समावेश अभीतक नहीं हुआ, यह बड़ेही हर्षकी बात है ! ऐसी एकता सदैवके लिये बनी रहे इस बातका स्मरण रखना आपका परम कर्तव्य है ! अपनेमें इस समय कैसा सम्प है इस प्रश्नका उत्तर यह मुनिसम्मेलन अच्छी तरहसे दे रहा है !

मुनिवरो ! यह एकतारूप तंत्र बड़ाही प्रभावशाली है ! उन्नतिके प्रशस्त मार्गमें चलने वा चलानेवाले सत्पुरुषोंके लिये इस महामंत्रका अनुष्ठान बड़ाही हितकर है ! इसकी कृपासे

धर्मकार्यमें विघ्न उपस्थित करनेवाले अदृश्य जंतु वहुतही शीघ्र दूर हो जाते हैं !

इसके महत्वका अनुभव आप स्वयंही कर लीजीये.

आपके एकता रूप अभेद्य किलेकी प्रौढ दीवारको तोड़नेके लिये यत्न करनेवाले वहुतसे क्षुद्र मनुष्य मुंहके वल गिरे होंगे ! ऐसा मेरा विश्वास हैं. एकताके साम्राज्यमें किसीकी ताकत नहीं जो अपना उलटा दखल जमा सके ! यदि आप एकताके सच्चे अनुरागी न होते तो यह सौभाग्य आपको कदापि न प्राप्त होता जो कि इस वक्त हो रहा है !

यह मुनिसम्मेलन जैनधर्ममें वहुत दिनके पीछे प्रथमही हुआ है इस सम्मेलनको देख वहुतसे महानुभावोंके चित्तका आकर्षित होना एक स्वाभाविक वात है. परंतु जैन समाजके लिये यह सम्मेलन विशेष हर्षजनक होगा ऐसी मुझे आशा है!

महाशयो ! मुझे फिर कहना चाहिये कि इस कार्यमें जैसी आप लोगोंने सहानुभूति प्रकट की है, वह विशेष प्रशंसनीय है ! यदि ऐसा न होता तो, इस कार्यमें मुझे वह सफलता कदापि न प्राप्त होती जो इस वक्त हुई है. इस लिये आपके इस सद् उद्योग और प्रेमका मैं वहुत आभार मानता हूं.

मुनिसम्मेलनमें पास किये गये प्रस्तावोंमेंसे आचार संबंधी नियम कोई नवीन नहीं हैं. क्यों कि, अपने समुदायमें आचार द्रव्य क्षेत्रकाल और भावके अनुसार जैसा चाहिये गुरु कृपासे प्रायः वैसाही है; परंतु भविष्यमेंभी कदाचित् कुछ न्यूनता नहो इस लिये ऐसे प्रस्तावोंका पास करना

उचित समझा गया है. जाहिर भाषण देनेसे धर्मकी कितनी उन्नति हो सकती है इस बातका उत्तर समयके आन्दोलनसे आपको अच्छी तरहसे मिल सकता है. साथमें यहभी स्मरण रहे कि, सम्मेलनमें पास हुए नियमोंको जबतक आप अमलमें न लावेंगे तब तक कार्यकी सिद्धिका होना सर्वथा असंभव है. आत्म उन्नति और धर्म उन्नतिका होना कर्त्तव्यपरायणता परही निर्भर है. दीक्षा संबंधी जो नियम पास किया है उसकी तर्फ पूरा ख्याल रखना. आजकल जो साधु निंदाके पात्र हो रहे हैं उनमेंसे अधिक भाग वही है जो शिष्य वृद्धिके लालचसे अकृत्यमें तत्पर हो रहा है ! अपना समुदाय यद्यपि इस लांछनसे अभीतक वर्जित है, तथापि संगति दोषसे भविष्यमेंभी ऐसे कुत्सित आरोपका भागी न हो इस लिये इसका स्मरण रखना जरूरी है.

महाशयो ! अब मैं आपका अधिक समय नहीं लेना चाहता अपने व्याख्यानको समाप्त करता हुआ इतना कहना अवश्य उचित समझता हूं कि, श्रावकवर्य गोकलभाई दुल्लभदासने इस सम्मेलनके लिये जो परिश्रम उठाया है और बडौदाके श्रीसंघने सम्मेलनमें आये हुए. सैंकड़ों स्त्री मनुष्योंकी जो भक्ति की है वह सर्वथा प्रशंसनीय है. अंतमें अर्हन् परमात्मासे प्रार्थना करता हुआ आपसे कहता हूं कि, परकल्याणकोही स्वकार्य समझ निरंतर धर्म उन्नतिमेंहीं तत्पर रहना आपका परम कर्तव्य है !

" उपसर्गाः क्षयं यान्ति छिद्यन्ते विघ्नवल्लयः ।
" मनः प्रसन्नतामेति पूज्यमाने जिनेश्वरे ॥ १ ॥

" सर्वमंगलमांगल्यं सर्वकल्याणकारणं ।
" प्रधानं सर्वधर्म्माणां जैनं जयति शासनम् ॥ २ ॥

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः

सभापतिजीके व्याख्यानके अनंतर जयध्वनीपूर्वक सभा विसर्जन हुई.

" लेखक प्रार्थना. "

प्यारे पाठको ! मैं इस सम्मेलनमें स्वयम् उपस्थितथा इसलिये जो कुछ मेरे देखने व सुननेमें आया है वही अपनी लेखनीद्वारा उध्धृत कर आपकी सेवामें निवेदन किया गया है. " धावतस्खलनं क्वापि " इस न्यायसे यदि कुछ लिखनेमें त्रुटि रह गई हो तो कृपया क्षमा करें.

आपका कृपाभिलाषी हीरालाल शर्म्मा.
मैनेजर श्रीआत्मानंद जैन लायब्रेरी ' अमृतसर ' (पंजाब.)

☞ ॥ सम्मेलनमें उपस्थित महात्माओंके नाम. ॥

१ श्री १०८ श्री आचार्य महाराज श्रीविजय कमलसूरि.
२ श्री १०८ श्री उपाध्यायजी महाराज श्रीवीरविजयजी.
३ श्री १०८ श्री प्रवर्त्तकजी महाराज श्रीकांतिविजयजी.
४ श्री १०८ मुनिमहाराज श्रीहंसविजयजी.
५ पंन्यासजी महाराज श्रीसंपत्विजयजी.
६ मुनि महाराज श्री वल्लभविजयजी.

७ मुनिश्री मानविजयजी. ८ पंन्यासजी श्रीदानविजयजी.
९ मुनिश्री चतुरविजयजी १० मुनिश्री विवेकविजयजी.
११ मुनिश्री लाभविजयजी १२ मुनिश्री कीर्त्तिविजयजी.
१३ मुनिश्री दोलतविजयजी १४ मुनिश्री नयविजयजी.
१५ मुनिश्री अनंगविजयजी. १६ मुनिश्री हिम्मतविजयजी.
१७ मुनिश्री नेमविजयजी. १८ मुनिश्री प्रेमविजयजी.
१९ मुनिश्री उत्तमविजयजी. २० मुनिश्री ललितविजयजी.
२१ मुनिश्री सोमविजयजी. २२ मुनिश्री धर्मविजयजी.
२३ मुनिश्री संतोषविजयजी. २४ मुनिश्री लावण्यविजयजी.
२५ मुनिश्री दुर्लभविजयजी. २६ मुनिश्री सोहनविजयजी.
२७ मुनिश्री नायकविजयजी. २८ मुनिश्री मंगलविजयजी.
२९ मुनिश्री विमलविजयजी. ३० मुनिश्री कस्तूरविजयजी.
३१ मुनिश्री कुसुमविजयजी. ३२ मुनिश्री पद्मविजयजी.
३३ मुनिश्री शंकरविजयजी. ३४ मुनिश्री उमंगविजयजी.
३५ मुनिश्री मेघविजयजी. ३६ मुनिश्री विज्ञानविजयजी.
३७ मुनिश्री विबुधविजयजी. ३८ मुनिश्री जिनविजयजी.
३९ मुनिश्री तिलकविजयजी. ४० मुनिश्री विद्याविजयजी.
४१ मुनिश्री विचारविजयजी. ४२ मुनिश्री विचक्षणविजयजी
४३ मुनिश्री पुण्यविजयजी. ४४ मुनिश्री तरुणविजयजी.
४५ मुनिश्री मित्रविजयजी. ४६ मुनिश्री कर्पूरविजयजी.
४७ मुनिश्री समुद्रविजयजी. ४८ मुनिश्री लक्षणविजयजी.
४९ मुनिश्री मेरुविजयजी. ५० मुनिश्री उद्योतविजयजी.

"परिशिष्ट."

[सम्मेलनकी निसवत न्यूज़ पेपरोंकी राय.]

पाठकवृंदको विदित होवे कि, सम्मेलनकी कार्रवाईके तयार करने समय तक में कितनेक अखबारोंमें उक्त सम्मेलनकी निसवत बहुतही अच्छे और मनन करने लायक अभिप्राय प्रकट हुए मेरी नजरमें आये, उनका थोड़ा थोड़ा सार-मात्र लेख आपको भेट करता हूं. उमीद है कि, आपभी गुणग्राहक बन अपनी और सम्मेलनकी दिनादिन प्रति उन्नति होवे ऐसी अपने इष्टदेवसे सचे अंतःकरणसे प्रार्थना करेंगे ! (लेखक.)

☞ "श्री सयाजी विजय."

(वडोदा-ता. २० जून-१९१२.)

जैन मुनियोंका सम्मेलन.

गत गुरुवारको इस शहरमें जैन धर्मके आचार्य श्रीमद्विजयानंदसूरि (आत्मारामजी) महाराजके समुदायके जैन मुनि महाराजोंका सम्मेलन आचार्य मुनिश्री कमलविजयजी महाराजके अध्यक्षपनेमें हुआथा.

उक्त मुनिमंडलके कार्यक्रममें उनके जीवनके उचित सादापन और सरलताको देख हमको अधिक संतोष होता है। आजकल अधिक खर्चवाली कॉन्फ्रन्सकी निसवत ऐसे सादे सम्मेलन अधिक कार्य साधक होते हैं. और हम इच्छा करते हैं कि, जैन धर्मके सकल समुदायके मुनि, तथा वैष्णव धर्मके आचार्य प्रभृति विविध धर्मके धर्मगुरु, निज निज सुधारे और धर्मकी उन्नतिके निमित्त सम्मेलन-द्वारा अपने और अपने अनुयायी प्रजावर्गके कल्याणार्थ प्रयत्नशाली होंगे !

यह संमेलन केवल आत्मारामजी महाराजकी समुदायके जैन मुनिओं का था. यदि इससे जुदे जुदे कुल समुदायोंका एकत्र संमेलन होता तो अधिक श्रेयस्कर और कार्यसाधक होता इसमें शक नहीं ! परंतु यहां मालूम करना चाहिये कि, इस विषयमें इस समुदायका किंचिन्मात्रभी दोष नहीं निकाला जा सकता !

आचार्य मुनिश्रीने अपने प्रमुखपनेके विद्वत्ताभरे व्याख्यानमें मालूम कियाथा कि, ऐसी एकत्र कॉन्फ्रन्स करनेका आंदोलन हो चुकाथा ! परंतु कितनेक कारणोंसे सर्वका एकत्र होना असंभव सा जान यह एकही समुदायका सम्मेलन हुआ है.

'कहनेसे करना अच्छा' इस सिद्धांतानुसार उक्त समुदायके मुनियोंने जो स्तुत्य प्रवृत्ति की है उसका अनुकरण कर अन्य समुदायवालेभी आगेके लिये एक सह मत हो एकत्र जैन मुनिमंडल सम्मेलन करेंगे ऐसी आशा की जाती है !

"मुंबई समाचार"

(सोमवार—ता. २४-७-१२.

वडोदा शहरमें श्रीआत्मारामजी महाराजके साधु सम्मेलनने जो उत्तम अगुआपन किया है वह उनके अन्य बंधुओंको भी समय बीतनेपर एकांत वाससे जाहिर होनेमें उपयोगी हुए विना न रहेगा !

मुनिश्री वल्लभविजयजी तथा सम्मेलनके प्रमुखने अपने व्याख्यानमें जो विचार दर्शाए हैं वे जैसे साधु सम्मेलनकी आवश्यकता सिद्ध करनेवाले हैं, वैसे ही साधुओंके साथ जैनशासनकी उन्नति करनेके मार्ग दिखानेवालेभी हैं. ऐसा बेधड़क कहा जा सकता है ! सभाध्यक्षके व्याख्यानमें की हुई सूचनाएँ जितनी साधुओंको लक्षमें लेने योग्य हैं, उतनी ही सकल जैन संघकोभी ध्यानमें लेनी योग्य हैं. साधु सम्मेलनकी उपयोगितामें जिनके मन अद्यावधि संशयग्रस्त हो या डिगमिगाते हो वह इस एकही उदाहरणसे अपनी भूल देख उसके सुधारनेका और सम्मेलनके कार्य कर्ताओंको सहानुभूति देनेका अपना फरज समझेंगे !

" मुनि सम्मेलनपर मेरी सम्मति. "

(लेखक-वीरपुत्र-आनंदसागर.)

मुंबई-हिन्दीजैन-ता. १८ जौलाई १९१२.

गुजरात देशमें वडौदा नामक अति मनोहर शहर है वहांपर कितनेक समयसे श्रीमद्विजयानंद सूरीश्वर (आत्मारामजी) महाराजके पटधर श्रीमद्‌विजय कमल-सूरिजी महाराज विराजमान हैं, तथा आपके आज्ञानुसारी सर्व मुनि महाराजभी अपूर्व लाभके कारण एकत्रित हुएथे. मैं यही विचारताथा कि, इस मुनि मंडलीके सम्मेलनसे कोई अपूर्व लाभ अवश्यही प्राप्त होगा.

आहा ! मेरा वह शुभ विचार हिंदीजैन अंक नं. ४३ के पृष्ट नंबर ७ ने पुर्ण कर दीया ! आप सुज्ञ मुनिवरोंने अपने कर्त्तव्योंको उच्च श्रेणीपर लानेको अत्यंत अनुमोदनीय २४ प्रस्ताव पारा किये. यदि मैं एक एक प्रस्तावकी व्याख्या करूं तो बेशक एक छोटा ग्रंथ बन सकता हैं ! मगर समय कम होनेसे केवल हार्दिक धन्यवादके साथ प्रार्थनारूप थोडेसे शब्द लिखनेका प्रयत्न करूंगा. वर्त्तमान जमानेकी हालत देखते यह प्रस्ताव स्वर्णमय अक्षरोंसे लिखने योग्य हैं ! मैं हरएक संघाडे पतिसे प्रार्थना करता हूं कि इस संमेलनका अनुकरण करके सर्व त्रुटियोंको निकाल कर उत्तम क्रियामें प्रवृत्त होवें ताके वीर लिंगका सत्कार बढे तथा आत्म सुधार हो !

" सांजवर्तमान. "

(मुंबई—गुरुवार. ता. २७-७-१९१२.)

हमको देख संतोष होता है कि, जैनोंमे मान पाये हुए और जिनके वर्त्तन संबंधी किसी जैनने आक्षेप नहीं किया है! ऐसे आत्मारामजी महाराजके साधुओंका वडोदामें सम्मेलन हुआथा. प्रमुखस्थाने श्रीविजयकमलसूरि विराजे थे. आप वृद्ध और अनुभवी हैं! आपनें अपनें व्याख्यानमें प्रकट तया जाहिर किया है कि, आजकलके समयमें सर्व साधुओं की कॉन्फ्रन्स (सभा) एकत्र होनी अशक्य समझ एकही समुदायके साधुओंका सम्मेलन हुआ है.

इस सम्मेलनके पास किये प्रस्ताव अत्यावश्यकीय हैं. उनका पालन इस समुदायके साधुतो अवश्यही करेंगे; परंतु हम निश्चय करते हैं कि, यदि अन्यान्य समुदायके साधुभी इनका पालन करेंगे तो जैन कौममें वारंवार खड़े होते टंटे फिसाद दूर हो जावेंगे!

वडौदेकी इस कॉन्फ्रेन्सके पास किये प्रस्ताव कितनेक जैन साधुओंको रुचिकर न होंगे! और कितनेक अपनेपर आक्षेप रूप समझेंगे! परंतु जैन प्रजाका फरज है कि, इस सम्मेलनके पास किये प्रस्ताव अन्य साधुभी पालन करे ऐसा उद्यम करें! यदि ये प्रस्ताव जैन धर्मके अनुकूल हैं तो उस प्रकारका वर्त्ताव करनेके लिये अन्य साधुओंको प्रेरणा करनेमें कोई प्रकारकी गैर मुनासिबी नहीं समझी जा सकती! बलकि, जो साधु इन प्रस्तावोंको न स्वीकार करें उनको साधु तरीके कितना मान देना उसपर विचार करनेका मौका जैनोंको मिल जायगा! क्यों कि जैनोंकी खरी उन्नति उनके साधुओंके सुधारेमें रही हुई है और धर्मगुरुके वर्त्तनके अनुसार प्रायः सामान्य लोगोंकी प्रवृत्ति होती है!